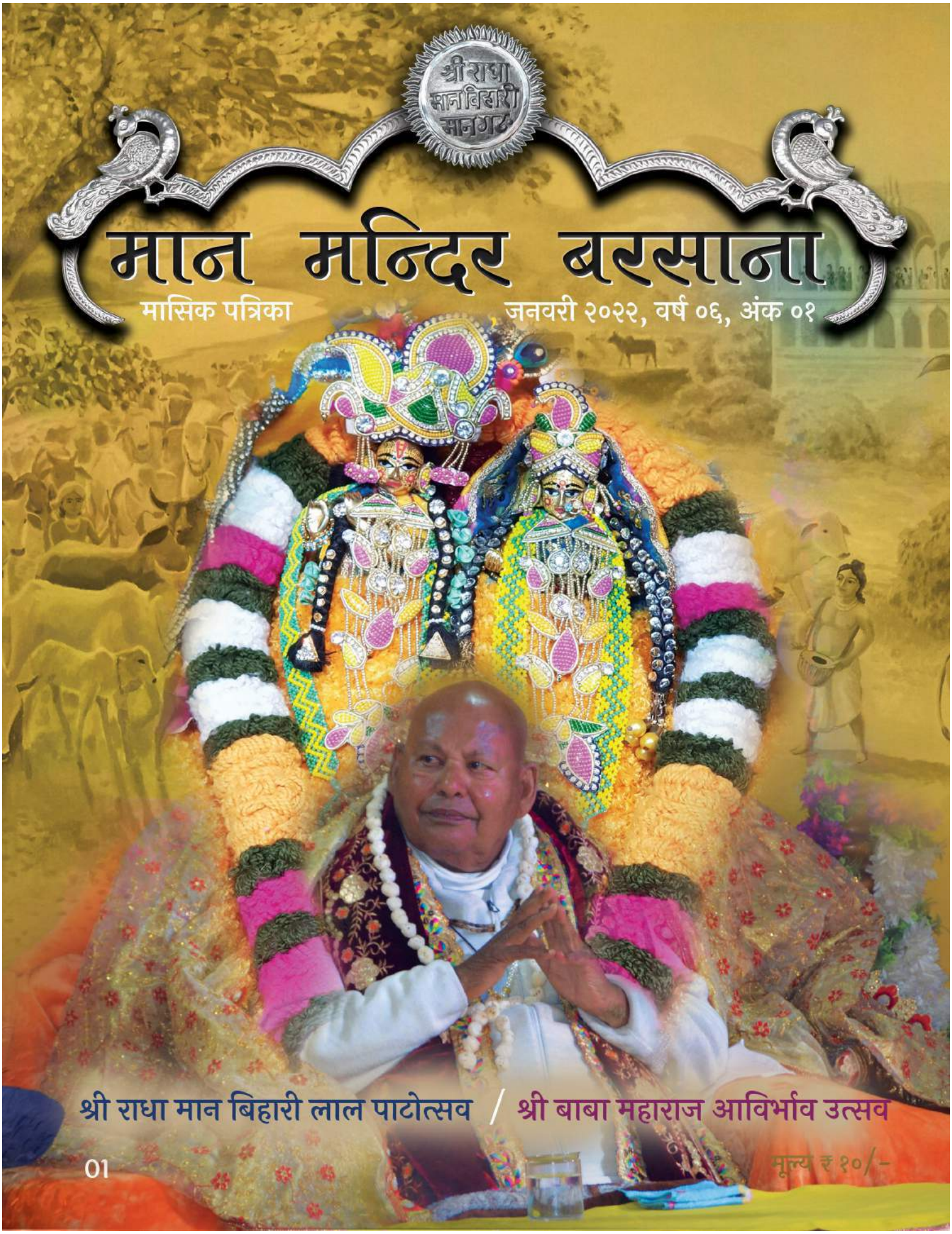

मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका

जनवरी २०२२, वर्ष ०६, अंक ०१

श्री राधा मान बिहारी लाल पाटोत्सव / श्री बाबा महाराज आविर्भाव उत्सव

मूल्य ₹ १०/-

श्री राधा मान बिहारी लाल पाटोत्सव

श्री राधा मान बिहारी लाल जी का प्रातःकालीन अभिषेक एवं समाज गायन

अनुक्रमणिका

विषय- सूची **पृष्ठ- संख्या**

१ श्रीब्रज-सेवा का सूर्य 'श्रीमानमंदिर'....०५
२ सुसंस्कारों से संस्कृति-संरक्षण सहज ०८
३ श्रीराधारसमय 'बरसाना धाम'.....१०
४ गौ-सेवाराधन से सर्वकाम सुलभ १२
५ श्रीयुगलरसमय 'यमुनाजी'.....१४
६ सरल-सरस साधन 'श्रीयुगलमन्त्र-आराधन'.....१५
७ 'सुदैन्य' से ही परम संतृप्ति.....१८
८ संत-सेवी 'श्रीकपूरजी'.....२१
९ 'सत्संगमय संकीर्तन' से निर्विकारता.....२२
१० प्रबल मोह 'मैथुनी-आसक्ति'.....२३
११ श्रीभक्ति के संप्रचारक 'आचार्यजन'.....२६
१२ समर्पण का स्वरूप.....२९
१३ श्रीभक्ति की पहिचान 'सहनशीलता'.....३२
१४ समता से असली योग.....३४

हर रात रंगीली होती है

हर रात रंगीली होती है, महफिल का नजारा होता है।
है शुक्र मेहरबानी का तेरे, हर रात करिश्मा होता है॥
जहाँ भक्त तेरे गुण गाते हैं, आनंद में नाचा करते हैं,
बैकुंठ छोड़ तू आता है, रस रूप तू बरसा करता है।
क्या इसके मैं काबिल भी था, जो तेरी कृपा को पा भी सकूँ,
आश्चर्य है इस दयालुता का, ये कैसा तमाशा होता है।
जो धूर थी सब के पैरों की, रुख हवा से वो आसमां चढ़ी,
अब सब के सिर पर चढ़ती है, ऐसा भी तमाशा होता है।
अलबेला दाता तू दिलबर, मनमोहन छैला तू नटवर,
जब तू राधे संग होता है, क्या से क्या तू हो जाता है।
है यही विनय मेरी तुझ से, बस धूर बना इन चरणों की,
न्यौछावर है सब ब्रज जिन पर, जिनको जग चूमा करता है।

– पूज्यश्री बाबा महाराज कृत

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो |

– **पूज्यश्री बाबा महाराज कृत**

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – **राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,**
गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)
(Website :www.maanmandir.org)
(E-mail :info@maanmandir.org)
mob. Radhakant Shastri 9927338666
Brajkishordas.....6396322922

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं।

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रेमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ सेवा प्रकल्प को दान कर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें | हिन्दू शास्त्रों में अंश मात्र गौ सेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

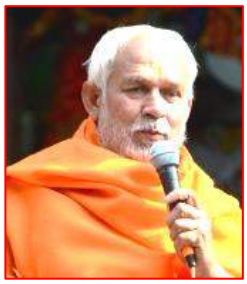

प्रकाशकीय

जीवन में प्रत्येक 'कर्म' चाहे वह सद्-असद् कैसा भी हो, हमारे मन-मस्तिष्क पर प्रभाव अवश्य ही डालता है, अतः चिन्तनीय यह है कि हमें सावधान होकर ही कर्मों में प्रवृत्त होना चाहिए; उस 'करणीय कर्म' की शिक्षा स्वयं भगवान् या महापुरुषजन समय-समय पर अवतरित होकर दिया करते हैं – **यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।**

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥ (श्रीगीताजी ४/७)

यही कारण है कि आज भी 'भारतीय संस्कृति' की अमिट छाप सम्पूर्ण जगत पर विद्यमान है। भगवान् 'श्रीकृष्ण' ने अवतरित होकर 'गीताज्ञान' सम्पूर्ण जगत को दिया। भगवान् 'श्रीराम' ने 'मातृभक्ति-पितृभक्ति व भ्रातृप्रेम' का अद्भुत-अनौखा उदाहरण प्रस्तुत किया। इसी तरह 'सूर, तुलसी, मीरा...' आदि अनेक महापुरुषों का जीवन हमारे लिए प्रेरणास्पद है; हजारों-हजारों वर्ष ही नहीं, अनन्तकाल तक उनकी स्मृतियाँ जन-जन में व्याप्त रहती हैं। हमारी 'सांस्कृतिक विरासत' ऐसे ही महापुरुषों के कारण अखण्ड बनी हुई है; तभी तो हम उनके 'कृतित्व-व्यक्तित्व' से प्रभावित होकर उनकी न केवल याद करते हैं अपितु उनका 'उत्सव' भी मनाते हैं। ऐसी ही दिव्य विभूति परमाराध्य पूज्यपाद पद्मश्री **श्रीरमेशबाबाजीमहाराज** धराधाम पर अवतरित हुए और उन्होंने **'ब्रजवासी व ब्रज-वसुन्धरा'** को अपना आराध्य मानकर इन्हीं की सेवा में गत ७० वर्षों से अपने को समर्पित कर रखा है, 'मानमन्दिर, बरसाना' में आप अखण्ड ब्रजवास करते हुए लोक-कल्याण में निरन्तर सेवारत हैं।

२६ दिसम्बर को आपका 'प्राकट्योत्सव' ब्रजवासियों ने मनाया। यद्यपि अपने प्रकाशन से दूर रहे 'बाबाश्री' किसी भी प्रदर्शन के विपरीत हैं परन्तु 'ब्रजवासियों' का सम्मान आपके हृदय में इतना है कि उन्हें मना भी नहीं कर पाते हैं। इस अवसर पर देश के प्रतिष्ठित 'संगीतकार-नर्तक' अपनी प्रस्तुति देकर अपनी सेवा प्रदान कर रहे हैं। हमारे पाठकों को भी हमारी पत्रिका 'मानमन्दिर बरसाना' के माध्यम से कुछ झलकियाँ पहुँच सकें, इस आशय से विचार प्रस्तुत हैं।

प्रबन्धक

राधाकान्त शास्त्री

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्रीब्रज-सेवा का सूर्य 'श्रीमानमंदिर'

गुजराती भाषा में 'रसीली ब्रजयात्रा' ग्रन्थ का विमोचन – ब्रज से सम्बंधित विस्तृत और प्रामाणिक ग्रन्थ के अभाव के कारण पूज्य श्रीबाबामहाराज की प्रेरणा से मानमन्दिर सेवा संस्थान द्वारा हिन्दी भाषा में 'रसीली ब्रजयात्रा' ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा चुका है, इसका लेखन-कार्य मानमन्दिर की अति निःस्पृह व परम विदुषी व्यासाचार्या साध्वी मुरलिकाजी के द्वारा किया गया है | इस ग्रन्थ का अंग्रेजी भाषा में भी अनुवाद किया जा चुका है | भारत के सभी प्रान्तों के ब्रजप्रेमी भक्तों के द्वारा इस ग्रन्थ की अनेक भाषाओं में प्रकाशन की माँग की जा रही है; उन्हीं के अनुरोध पर इस ग्रन्थ का 'गुजराती भाषा' में अनुवाद और प्रकाशन किया गया | इस बार 'राधारानी ब्रजयात्रा' के अंतिम पड़ाव कामां (कामवन) में 'गुजराती भाषा में प्रकाशित रसीली ब्रजयात्रा' ग्रन्थ का पूज्य श्रीबाबामहाराज के द्वारा विमोचन किया गया |

फ़िल्मी-संगीत से दूषित समाज को ब्रजरस की आवश्यकता – 'ब्रजभूमि' साक्षात् श्रीराधामाधव का सच्चिदानन्दमय स्वरूप व प्रेममय धाम है | साढ़े पाँच हजार वर्ष पूर्व ब्रज में प्रकट होकर श्रीभगवान् ने जिस विलक्षण, अनुपम-अलौकिक प्रेमरस की वर्षा की, वैसा रस इसके पूर्व किसी भी अवतार में प्रवाहित नहीं हुआ; श्रीभगवान् की आह्लादिनी शक्ति 'श्रीराधिकारानी' की कृपा से ही उनके कृपापात्रजन इस अलौकिक रस का आस्वादन कर सके | द्वापरयुग की समाप्ति के पश्चात् कलिकाल का आगमन होने पर तो सर्वत्र ही वातावरण कलिमल से प्रदूषित हो गया | धर्मप्राणभूमि भारतवर्ष में असुर यावनी शासकों ने हजारों वर्षों तक शासन करके 'सनातन-धर्म' को जड़ से उखाड़ने का भरसक प्रयास किया, लेकिन वे विफल रहे क्योंकि इस शाश्वत-सनातनी परम्परा (सनातनधर्म) का समूलतः विनाश कभी नहीं होता है | सदा से रहने वाले (अविनाशी) 'सनातनधर्म' की रक्षा 'श्रीभगवान्' संतों के रूप में या स्वयं अवतरित होकर प्रत्येक युग में करते हैं | श्रीकृष्णलीला बहुत पवित्र है, उसमें काम का लेशमात्र भी नहीं है | श्रीमद्भागवत में तो शुकदेवजी ने रासपंचाध्यायी की फलश्रुति में कहा है कि जो श्रद्धा के साथ 'भगवान् श्रीकृष्ण की रासलीला' का कथन-श्रवण अथवा पाठ करता है, उसके हृदय का काम-रोग सदा के लिए समाप्त हो जाता है परन्तु मुसलमानों के शासनकाल में यवन-शासकों ने कृष्णलीला में भोग का जबरन समावेश करके इसको बदनाम करने का प्रयास किया | रासलीला के रहस्य को भोगी मुस्लिम शासक समझ नहीं सके और अनेकों स्त्रियों के साथ व्यभिचार यह कहकर करने लगे कि हम तो भगवान् श्रीकृष्ण का अनुकरण कर रहे हैं; यह सब घोर पाप है | इस तरह का पापाचरण करके मुस्लिम शासकों ने 'सनातन-धर्म' को बहुत क्षति पहुँचायी | उस समय सम्पूर्ण भारतवर्ष में भगवान् की ही कृपा से उनके पार्षदों ने संत-महापुरुषों के रूप में प्रकट होकर कलिकाल के कुठाराघात से नष्टप्राय हो चुके सनातनधर्म की पुनः स्थापना की | श्रीकृष्णभक्ति के विविध सम्प्रदाय प्रकट हुए और इनके संस्थापकाचार्यों व उनके अनुगत महापुरुषों ने ब्रजरस से युक्त कृष्णभक्ति का सम्पूर्ण देश में व्यापक रूप से प्रचार-प्रसार किया | महापुरुषों की इसी श्रृंखला में प्रयाग में अवतरित परम श्रद्धेय श्रीरमेशबाबाजीमहाराज ने भी मात्र १७ वर्ष की किशोरावस्था में ही अपनी जन्मभूमि का परित्याग कर राधारानी की लीलाभूमि बरसाना का आश्रय लिया और अखण्ड ब्रजवास करते हुए आज भी वे सम्पूर्ण विश्व में सर्वतोभावेन 'ब्रजरस' का प्रचार करने में संलग्न हैं | 'श्रीबाबामहाराज' ब्रजवास के अपने प्रारम्भिक दिनों में ब्रजभूमि की परिक्रमा करते थे और सम्पूर्ण ब्रजमंडल के गाँवों में भ्रमण करते थे | महाराजश्री ने देखा कि आज से पचास-साठ वर्ष पूर्व ब्रजभूमि का एक अलौकिक भक्तिमय वातावरण था | उस समय गाँव-गाँव में अखाड़े होते थे, जिनमें ब्रजवासी नवयुवक व्यायाम करते और कुश्ती लड़ते थे किन्तु इसके साथ ही उनकी एक कीर्तन मण्डली भी होती थी | व्यायाम करने के पश्चात् ये नवयुवक अखाड़े

में ही बैठकर घंटों तक ब्रज के कृष्ण भक्तिपरक लोकगीत (रसिया) गाते और कीर्तन करते थे | उस समय ब्रज में टेलीविजन और सिनेमा का प्रदूषण नहीं था, इसलिए ब्रज का वातावरण अत्यधिक भक्तिमय और सरस था किन्तु समय के परिवर्तन के साथ ही आगे चलकर सम्पूर्ण भारत में जब टेलीविजन और सिनेमा का दुष्प्रभाव बढ़ा तो ब्रज भी इससे अछूता नहीं रह सका और धीरे-धीरे टेलीविजन का प्रचलन ब्रजभूमि में भी हो गया | टेलीविजन के आगमन ने ब्रज-संस्कृति को पददलित करना आरम्भ कर दिया | टेलीविजन के माध्यम से फ़िल्मी दुनिया और उसके काम कलुषित विषैले संगीत ने ब्रजवासियों को अपने जाल में ऐसा फँसाया कि जिस ब्रज में पहले घर-घर में और व्यायाम के अखाड़ों तक में कीर्तन होता था, रसिया गाये जाते थे, आज उसी ब्रज में अब ब्रजवासी अपनी महान गौरवशालिनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं, कीर्तन के स्थान पर अब यहाँ सर्वत्र फिल्मों के विषैले गीत ही सुनायी पड़ते हैं | ब्रजवासी देवदुर्लभ ब्रजरस से तेजी से विमुख होते जा रहे हैं | श्रीबाबामहाराज ने अपना सम्पूर्ण जीवन ब्रज-संस्कृति की रक्षा में, ब्रजवासियों को कृष्णभक्ति से जोड़ने में ही व्यतीत कर दिया | वर्तमानकाल में फिल्म-जगत से उत्पन्न भौतिकतावाद की चकाचौंध ने जिस तरह ब्रजवासियों व यहाँ की संस्कृति को अपनी चपेट में लिया, उससे श्रीबाबामहाराज का मन बहुत व्यथित हुआ है; उनका कहना है कि मुंबई का फिल्म उद्योग और इसका भोग प्रधान दूषित संगीत न केवल ब्रज-संस्कृति के लिए अपितु भारतीय-संस्कृति के लिए बहुत बड़ा खतरा है, इसने भारतीय समाज को माया-मोह एवं कामुकता के कीचड़ में इस तरह धकेल दिया है कि उससे उबर पाना बहुत दुष्कर कार्य हो गया है | वास्तव में राधाकृष्ण के विशुद्ध प्रेम से युक्त ब्रजरस और उस पर आधारित ब्रज के लोकगीत (रसिया) ही ब्रजवासियों को और सम्पूर्ण भारतीय समाज को फिल्म जगत और उसके संगीत के कलुषित दुष्प्रभाव से उबार सकते हैं | पूज्य महाराजश्री ने इस महान कार्य का उत्तरदायित्त्व मानमन्दिर की दिव्य साध्वियों को सौंपा है | पूज्यश्री का कहना है कि मानमन्दिर की आराधिकाएँ धन, विषयभोग और यश की त्रिविध एषणाओं का परित्याग कर ब्रजभूमि में अखण्डवास करते हुए सतत आराधनामय जीवन व्यतीत कर रहीं हैं, अतः इनके द्वारा किये गये निष्काम प्रचार से ही ब्रजवासियों को फ़िल्मी संगीत के विष से बचाया जा सकता है | इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु बाबाश्री द्वारा मानमन्दिर में 'राधिका संगीत विद्यालय' खोला गया है, जिसमें साध्वियों को अनेकों वाद्य बजाने की शिक्षा दी जा रही है | इसके साथ ही श्रीबाबामहाराज द्वारा रचित ब्रज के लोकगीतों (रसिया) की पुस्तक 'रसिया रसेश्वरी' के माध्यम से इन साध्वियों को रसिया गाने का भी प्रशिक्षण दिया जा रहा है | शास्त्रीय संगीत के माध्यम से ब्रज के लोकगीतों के गाँव-गाँव में प्रचार द्वारा 'मानमन्दिर की साध्वियाँ' ब्रज व सम्पूर्ण भारत से फ़िल्मी गीतों के दुष्प्रभाव को समाप्त कर 'विशुद्ध ब्रजरस' का प्रचार-प्रसार करेंगी |

१८ अक्टूबर २०२१ से लेकर १७ नवम्बर २०२१ तक ३१ दिवसीय श्रीराधारानी ब्रजयात्रा का ब्रज-परिक्रमा का कार्यक्रम संपन्न हुआ; इस यात्रा में सम्पूर्ण भारत से पाँच हजार से अधिक ब्रजयात्री सम्मिलित हुए | मानमन्दिर द्वारा प्रति वर्ष संचालित होने वाली यह पूर्णतया निःशुल्क ब्रजयात्रा है | कार्तिक के पवित्र महीने में यूँ तो ब्रज में सैकड़ों ब्रजपरिक्रमायें चलतीं है परन्तु बड़े ही दुःख का विषय है कि अब इन ब्रज परिक्रमाओं का व्यवसायीकरण हो गया है | अत्यधिक शुल्क के साथ ब्रजयात्रायें करायी जाती है और वह भी पदयात्रा न होकर अब तो वाहन यात्रायें होतीं हैं | वर्तमानकाल में ब्रज में मानमंदिर की ब्रजयात्रा को छोड़कर एक भी पदयात्रा नहीं होती है | इस बार की 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' का कार्यक्रम सदैव की भाँति ही अत्यधिक आनन्दप्रद रहा | कोरोना का प्रभाव अभी भी देश में होने के कारण पाँच हजार यात्री ही आ सके अन्यथा सामान्यकाल में तो प्रतिवर्ष पन्द्रह हजार से अधिक यात्री चालीस दिनों तक राधारानी ब्रजयात्रा का लाभ उठाते हैं | इस बार की यात्रा में पूज्य श्रीबाबामहाराज भी वाहन द्वारा बीच-बीच में सम्मिलित होते रहे | बालहरा से भाण्डीर वन जाते समय यमुना नदी को पार करना था | इस बार अत्यधिक वर्षा होने के कारण यमुनाजी में पर्याप्त जल था | सभी ब्रजयात्रियों ने स्टीमर नावों के द्वारा यमुना को पार किया | श्रीबाबामहाराज की यमुनाजी के प्रति अगाध श्रद्धा

है, इसलिए बालहरा से भाण्डीरवन की यात्रा में यमुनाजी को पार करने के अवसर पर स्टीमर के द्वारा श्रीबाबा ने भी नौका विहार किया | नौका विहार के माध्यम से महाराजश्री ने यमुनाजी की अलौकिक शोभा का आनन्द लिया | यमुनाजी में यह नौका विहार पूज्यश्री को इतना सुखद लगा कि जब यात्रा वृन्दावन पहुँची तो उन्होंने अलग से बालहरा से वृन्दावन तक यमुनाजी में 'नौकाविहार-कार्यक्रम' का आयोजन किया; इसके माध्यम से बाबामहाराज ने स्वयं स्टीमर नौकाओं के द्वारा मानमन्दिर के साधुओं और साध्वियों के साथ यमुना-यात्रा की | बाबाश्री की प्रेरणा से यमुनाजी में यह नौकाविहार अब 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' में प्रतिवर्ष हुआ करेगा |

ब्रजवासियों द्वारा 'राधारानी ब्रजयात्रा' का ब्रज के गाँवों में अत्यधिक स्नेह के साथ स्वागत-सत्कार किया जाता है | ब्रज तो वैसे भी प्रेम का धाम है | इस घोर कलिकाल में भी ब्रज के गाँवों में उदार ब्रजवासियों का बाहुल्य है जो साधु-संतों तथा अतिथि-अभ्यागतों का बड़े ही प्रेम के साथ आतिथ्य सत्कार करते हैं | वैसे तो ब्रज के अनेकों गाँवों में ब्रजवासियों ने 'राधारानी ब्रजयात्रा' का दिल खोलकर स्वागत किया किन्तु डीग तहसील के महमदपुर गाँव में तो वहाँ के ब्रजवासियों का जैसा प्रेम देखने को मिला वह तो अनिर्वचनीय है | इस गाँव में यात्रा के आगमन के एक दिन पूर्व ही यहाँ के ब्रजवासियों ने पाँच हजार से अधिक यात्रियों के लिए पाँच कुन्तल दूध एकत्रित करके दधि-मंथन द्वारा उससे माखन निकाला | इसके अतिरिक्त कई मन दही का रायता तैयार किया और घर-घर में चूल्हे पर हाथ की रोटी बनायी गयी | आजकल के मँहगाई से त्रस्त युग में आर्थिक दृष्टि से निर्धन परन्तु हृदय के धनी इन ब्रजवासियों ने यात्रा के गाँव में पदार्पण करने पर पाँच हजार से अधिक ब्रज यात्रियों को रोटी पर माखन लगाकर दिया, रायता और अन्य व्यंजन परोसे | इसके साथ ही यहाँ के स्त्री-पुरुषों ने ब्रज के भक्तिपरक लोकगीत (रसिया) गाकर अति उत्साह के साथ नृत्य किया | ड्रोन द्वारा यात्रियों के ऊपर पुष्प-वर्षा भी की गयी | ब्रजवासियों के अथाह प्रेम युक्त इस स्वागत-सत्कार से सभी ब्रजयात्री रोमांचित हो उठे और गद्गद कंठ से सबने उनकी सराहना की | वर्तमानकालीन स्वार्थपरायण संसार में प्रेम का ऐसा अनुपम उदाहरण मिलना सर्वथा असम्भव ही है |

ब्रज के सरोवरों में कमल लगाने का अभियान – जब ब्रजयात्रा मानसरोवर पहुँची तो श्रीबाबामहाराज भी अपने वाहन द्वारा वहाँ की यात्रा में सम्मिलित हुए | ब्रज के इस मान-सरोवर की बहुत अधिक महिमा है | शास्त्रों के अनुसार जब वृन्दावन में महारास हो रहा था और कैलाश से भगवान् शिव आसुरी मुनि के साथ उसका दर्शन करने पहुँचे तो द्वार पर खड़ी गोपियों ने इन दोनों को भीतर प्रवेश करने से रोक दिया; तब राधारानी की आज्ञा हुई कि शिवजी और आसुरी मुनि को मानसरोवर में स्नान कराया जाए, जिससे उन्हें गोपी स्वरूप की प्राप्ति होगी और तब वे रास का दर्शन कर सकते हैं | स्वामिनीजी की आज्ञा से शिवजी और आसुरी मुनि ने इसी मानसरोवर में स्नान करके अपने पुरुष स्वरूप का त्याग कर गोपी स्वरूप की प्राप्ति की और वृन्दावन में महारास का दर्शन किया | 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' जब मानसरोवर पहुँची तो परम ब्रज विभूषक संत श्रीबाबामहाराज ने मानमन्दिर के प्रबंधकों से कहा कि मानसरोवर में कमलपुष्प लगाये जाएँ | श्रीबाबा ने यह भी कहा कि श्रीकृष्णलीलाकाल में ब्रज के सभी सरोवर कमलपुष्पों से सुसज्जित रहते थे, अतः मानमन्दिर सेवा संस्थान द्वारा ब्रज के सभी सरोवरों में कमल लगाये जाएँ; यह ब्रजभूमि की बहुत बड़ी सेवा होगी | पूज्यश्री के इस आह्वान पर मानमन्दिर के प्रबंधकों ने आश्वासन दिया कि श्रीबाबामहाराज की इस आज्ञा का हम लोग यथासंभव पूर्ण रूपेण पालन करेंगे एवं मानसरोवर के अतिरिक्त ब्रज के अन्य सरोवरों में भी कमल लगाने का पूरा प्रयास करेंगे | मानमन्दिर में ब्रह्माचल पर्वत पर बीस वर्ष पूर्व श्रीबाबा की आज्ञा से एक कमलकुण्ड का निर्माण कर उसमें कमल- पुष्प लगाये गये थे, यह कमलकुण्ड मानमन्दिर पर आज भी विद्यमान है | हाल ही में गह्वरवन में भी पूज्य महाराजश्री की प्रेरणा से हजारों वृक्ष लगाये जाने के साथ ही कमलकुण्ड का निर्माण कर सैकड़ों कमल लगाये गए हैं | मानमन्दिर के संकीर्तन-भवन रसमण्डप में भी एक कमलकुण्ड है, जिसमें बहुत से कमलपुष्प लगे हैं; इसके साथ हाल ही में यमुना किनारे स्थित विहारवन में भी मानमन्दिर के संतों ने वहाँ के सरोवर में बहुत से कमलपुष्प लगाये हैं |

भगवान् इतने बड़े क्षमाशील हैं कि तुम जैसे भी हो यदि भगवान् की शरण में आ गये तो जैसे लोहा पारस के स्पर्श से सोना बन जाता है वैसे ही तुम भी उसी समय सोना बन जाओगे अर्थात् तुम्हारे सब पाप नष्ट हो जाएँगे।

सुसंस्कारों से संस्कृति-संरक्षण सहज

मानमन्दिर सेवा संस्थान के स्कूल रासेश्वरी विद्या मंदिर के बच्चे श्रीबाबामहाराज के जन्म दिन पर श्रीबाबा के दर्शन करने मान मन्दिर पर आए तो श्रीबाबा ने अपने उद्गार इनके समक्ष व्यक्त किये थे; यह घटना सन् २००६ की है | श्रीबाबा ने बच्चों के सामने जो विचार व्यक्त किये, वे वर्तमान काल के लिए भी बहुत ही महत्वपूर्ण हैं इसीलिए उनके व्याख्यान का विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है |

बाबाश्री के शब्दों में – मैं चाहता हूँ कि ब्रज के विद्यालयों में शिक्षा के साथ बच्चों को ऐसी सांस्कृतिक चेतना से युक्त शिक्षा दी जाए जिससे कि उस विद्यालय का प्रत्येक विद्यार्थी ब्रज- संस्कृति का एक सिपाही बने | बच्चो ! तुम्हें पता होना चाहिए कि भारत के महान स्वतंत्रता सेनानी सुभाषचन्द्र बोस ने अंग्रेजों के विरुद्ध जिस आजाद हिन्द फ़ौज की स्थापना की थी, उसमें आठ साल तक के बच्चे भी थे; यह बात हर विद्यालय में पढ़ाई जानी चाहिए | बड़े दुःख की बात है कि आज स्कूलों में बच्चों को स्वतंत्रता संग्राम के बारे में सही ढंग से नहीं पढ़ाया जाता है | सुभाषजी की सेना में जो बच्चे थे, वे इतने बहादुर थे कि वे अपनी छाती पर गोला-बारूद बाँधकर अंग्रेजों के टैंक के नीचे लेट जाते थे | एक बच्चा टैंक के नीचे गोला बाँधकर लेट जाता था तो उस टैंक पर सवार दुश्मन के सभी सैनिक नष्ट हो जाते थे | सुभाषजी का जल्दी ही देहांत हो गया, नहीं तो वे इतने बड़े वीर थे कि सारे विश्व में उनकी समानता कोई नहीं कर सकता था | जर्मनी का प्रसिद्ध तानाशाह हिटलर भी उनसे मिलकर नतमस्तक हो गया था, वह भी उनका सम्मान करता था; उस समय दुनिया में द्वितीय विश्व युद्ध चल रहा था | उस समय के दुनिया के बड़े-बड़े नेता और सेनानी 'सुभाषचन्द्रजी' का सम्मान करते थे | यह बड़ा लम्बा इतिहास है | सुभाषजी ने पूरी ब्रिटिश सत्ता को हिला दिया था, पूरी दुनिया को उन्होंने झकझोर दिया था; उन्होंने जापान और जर्मनी को द्वितीय विश्व युद्ध में अमेरिका और ब्रिटेन के विरुद्ध एक कर दिया था, उनका आकस्मिक निधन कैसे हो गया, इसका रहस्य आज तक नहीं खुल पाया | अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता संग्राम में सुभाषजी गरम दल के नेता थे और महात्मा गाँधीजी नरम दल के नेता थे; उस समय कांग्रेस पार्टी में ये दो दल हो गये थे | अंग्रेजों ने गरम दल के वीरतापूर्ण अभियान को देखकर जान लिया कि अब भारत जाग गया है और अब हम लोग अधिक देर तक भारतियों से लड़ नहीं सकते हैं | सुभाषजी एक बार जब नागपुर में भाषण दे रहे थे तो उसे सुनकर दस हजार लोग 'आजाद हिन्द फ़ौज' में भर्ती हो गये | सुभाषजी यदि जीवित होते तो सारा भारत आज न जाने क्या होता...| दुनिया में केवल 'सनातन धर्म' ही ऐसा है जो अहिंसा और शान्ति को लेकर चलता है | सम्पूर्ण विश्व अब इस बात को जान रहा है कि इस्लाम धर्म ने आतंकवाद को पैदा किया है और सारी दुनिया में यह आतंकवाद को फैला रहा है | यह एक सत्य बात है कि इस्लाम आज सारे संसार के लिए खतरा बना हुआ है, जबकि हिन्दूधर्म में न कभी खतरा था, न है और न ही होगा | ब्रज-संस्कृति की रक्षा के लिए साधुओं को, आचार्यों को, गोस्वामियों को आगे आना चाहिए | साधुओं की पंगतें होती हैं, उसमें लाखों रुपये खर्च किये जाते हैं किन्तु ब्रज के किसी कुण्ड की सफाई के लिए एक हजार रुपये भी नहीं दे सकते | लाखों की पंगत को खाकर विष्ठा त्याग कर देंगे किन्तु ब्रज की सेवा के लिए हजार रुपये भी नहीं दे सकते, ये हमारी हालत है; क्या साधु, क्या महंत, क्या मंडलेश्वर, क्या आचार्य, क्या जगद्गुरु, सभी की यही दशा है; ऐसी स्थिति में ब्रज की सेवा कैसे हो, ब्रज के लीलास्थलों का सुधार कैसे हो, ब्रज के किसी भी तीर्थ का उद्धार कैसे होगा, जब हम लोग ही डाकू बने हुए हैं; रक्षक ही भक्षक हो गया है | इसीलिए मैं कहता हूँ कि हमारे हाथ-पाँव कटे हुए हैं, हम लूले-लंगड़े हैं, हम अंधे हैं, हम दिशाहीन हैं | सत्य जीतता अवश्य है, राधारानी की दया से हमलोग सच्चाई से चले इसीलिए ब्रज में बहुत से असंभव कार्य हुए जो ब्रज में पहले कभी नहीं हुए; हर साल बहुत अधिक काम होता जा रहा है; ये क्यों हो रहा है जबकि हम लोग कहीं पैसा माँगने नहीं जाते हैं, चन्दा नहीं करते हैं | 'निष्काम सेवा भावना' होने से 'श्रीभगवान्' ही योगक्षेम धारण (सम्यक् निर्वाह) करते हैं | मानमन्दिर से प्रतिवर्ष ब्रज चौरासी कोस की निःशुल्क यात्रा चलती है | हम तो ऐसा सोचते हैं कि सारी शिक्षा निःशुल्क कर दो, किसी बच्चे से पैसा मत लो और शिक्षकों को अच्छा वेतन दो | ये दिखा दो कि 'विद्यालय' विद्यार्थियों के पैसे से नहीं चल

सकता है, विद्यालय चलता है 'भगवान् की कृपा' से, मैं इस प्रयास में हूँ | देखिये हमारे देश का आदर्श क्या है ? भारतवर्ष में कुलपति उसे कहा जाता था जो दस हजार विद्यार्थियों को निःशुल्क भोजन भी दे और शिक्षा भी दे |

केदारनाथ में अद्भुत चमत्कार का दर्शन - हिमालय में स्थित केदारनाथ में नहीं अपितु ब्रजभूमि में स्थित केदारनाथ में प्रतिवर्ष देवोत्थान एकादशी के दिन एक अलौकिक चमत्कार होता है; वह चमत्कार यह है कि इस शुभ दिन-रात के समय देवगण पर्वत स्थित केदारेश्वर महादेव की आकाश में अदृश्य रूप से स्थित होकर आरती करते हैं, उस समय घंटे, शंख इत्यादि बजने की ध्वनि भी सुनाई पड़ती है जबकि इन वाद्यों को बजाने वाला कोई भी दिखाई नहीं देता |

इस वर्ष ऐसा अद्भुत संयोग उपस्थित हुआ कि 'राधारानी ब्रजयात्रा' देवोत्थान-एकादशी के पावन दिवस पर केदारनाथ पहुँची और रात्रि का पड़ाव भी वहीं रहा | अर्द्ध रात्रि के समय 'राधारानी ब्रजयात्रा' के सौभाग्यशाली ब्रजयात्रियों को इस विलक्षण चमत्कार का दर्शन करने को मिला | ऐसा देखा गया कि रात के समय दीपक की तरह एक दिव्य ज्योतिपुंज केदारनाथ में पर्वत के नीचे स्थित गौरीकुण्ड से प्रकट होकर ऊपर उठा और ऊँचे पर्वत पर स्थित 'केदारेश्वर महादेव' के ऊपर आकाश में आरती करने की शैली में घूमने लगा, बहुत देर तक यह दिव्य ज्योतिपुंज आरती करते हुए आकाश में घूमता रहा | कुछ यात्रियों ने इस आश्चर्यजनक घटना की अपने मोबाइल से वीडियो रिकॉर्डिंग भी की | ऐसा अद्भुत चमत्कारपूर्ण लीलास्थल है यह ब्रज का केदारनाथ-क्षेत्र परन्तु अधिकांश लोगों को इसके बारे में कोई जानकारी नहीं है | उत्तराखण्ड में स्थित केदारनाथ को तो सभी जानते हैं किन्तु ब्रजभूमि में स्थित केदारनाथ और प्रतिवर्ष देवोत्थान-एकादशी को यहाँ होने वाली इस चमत्कारिक घटना को बहुत कम लोग ही जानते हैं, जिन्हें इनके दर्शन का लाभ लेना हो वे लोग 'राधारानी ब्रजयात्रा' में सम्मिलित होकर लाभान्वित हो सकते हैं |

भारतवर्ष के वर्तमान प्रधानमंत्री श्रीनरेन्द्रमोदीजी ने 'काशी में विश्वनाथ मंदिर परिसर' का उद्घाटन (दिनांक १३/१२/२०२१को) किया - मंदिर में जाने से पूर्व मोदीजी ने गंगाजी में डुबकी लगाई और स्वयं एक कलश में गंगाजल लेकर 'विश्वनाथ मन्दिर' में गये तथा महादेवजी को स्नान कराया | जब राजा (देश का शासक) ऐसा करता है तो प्रजा भी करती है, उन्होंने गंगाजी में बड़े प्रेम से कई डुबकी लगायी, अपने हाथ में गंगाजल लेकर मन्दिर में गये और शिवजी को स्नान कराया | एक राजा को ऐसा ही होना चाहिए, उन्होंने काशी विश्वनाथ का पूजन भी किया | सबसे महत्वपूर्ण कार्य जो उन्होंने किया, वह यह था कि उन्होंने काशी विश्वनाथ मंदिर परिसर के निर्माण में लगे गरीब मजदूरों का विशेष सम्मान किया | मोदीजी ने सभी श्रमिकों के ऊपर फूल बरसाए और उनके साथ बराबरी से बैठकर फोटो खिंचवायी | मोदीजी के बैठने के लिए प्रशासन की ओर से कुर्सी की व्यवस्था की गयी थी परन्तु उन्होंने उस कुर्सी को हटाकर एक ओर रख दिया और मजदूरों के साथ बराबरी से बैठे | इसके पश्चात् मोदीजी ने मजदूरों के साथ बैठकर भोजन किया; यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात थी | इससे मोदीजी के दिव्य गुणों की झलक मिलती है कि उनके अन्दर कितनी दीनता है और अपने पद का अहंकार लेशमात्र भी नहीं है | दुनिया में यह पहला अवसर था जब किसी देश का शासनाध्यक्ष (प्रधानमंत्री) गरीब मजदूरों के साथ बैठकर भोजन कर रहा हो | दुनिया में ऐसा आज तक किसी शासक ने नहीं किया |

हम (बाबाश्री) यहाँ की बालिकाओं से यही कहना चाहते हैं कि हम लोगों को मोदीजी के जीवन से 'दीनता की शिक्षा' लेना चाहिए | जो अपने जीवन में जितना छोटा बनता है, प्रभु उसे उतना ही बड़ा बनाता है | मानमन्दिर में सवा सौ आराधिकाएँ रहतीं हैं; यदि ये भारत में निष्काम भाव से ब्रजभक्ति का प्रचार करेंगी तो निश्चित है कि भारत में विशुद्ध भक्ति फ़ैल जाएगी और इन्हें मानबिहारीलाल की कृपा मिलेगी |

मोदीजी द्वारा काशी में विश्वनाथ मंदिर परिसर के उद्घाटन के कार्यक्रम को बड़ी स्क्रीन पर इसीलिए सभी को दिखाया गया ताकि हम लोग छोटे बनकर दीनता का भाव लाएँ, कीर्तन करें, नृत्य करें तो जनता भी इसे सीखेगी | मानमन्दिर की सवा सौ बालिकाएँ यदि इस तरह भक्तिमय भाव से प्रचार करेंगी तो निश्चित ही सम्पूर्ण भारतीय विशुद्ध भक्त बन जाएँगे...|

श्रीराधारसमय 'बरसाना धाम'

बाबाश्री के सत्संग (१३/१०/२०२१) से संग्रहीत

जो लोग 'बरसाने' में रह रहे हैं, उनके बारे में अनादिकाल से यह बात चली आ रही है –

बरसाने के वास को, आस करें शिव शेष |
यहाँ की महिमा को कहे, जहाँ स्याम धरें सखि भेष ||

परम रसमय 'श्रीबरसाने' में निवास करने के लिए महादेवजी, शेषजी इत्यादि भी इच्छा करते हैं | 'बरसाने की महिमा' थोड़े में यह समझ लो कि अनादिकाल से जो परम पुरुष श्रीकृष्ण हैं, जिनके बारे में ब्रह्माजी ने ब्रह्मसंहिता में कहा है – **"गोविन्दं आदिपुरुषं तमहं भजामि"** जो अनन्त ब्रह्मांडों के भी मूल व उनके सृष्टा हैं, वह परम पुरुष 'श्रीकृष्ण' भी यहाँ बरसाने में आकर के सखी वेश धारण करते हैं, जिससे कि श्रीराधारानी के चरणों की सेवा-प्राप्ति हो जाए | अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक 'भगवान्' भी 'श्रीजी' की कृपा प्राप्त करने के लिए 'बरसाने' में सखी रूप धारण करते हैं; ऐसा यह 'बरसाना' है | जिस 'बरसाने' में शेषावतार दाऊजी भी बरसाना-वास की आशा करते हैं; ऐसे 'बरसाना' में 'श्रीजी' ने कृपा किया कि जो हम लोग यहाँ आकर रह रहे हैं | पता नहीं कहाँ-कहाँ हम लोगों का जन्म हुआ था और न जाने अनादिकाल से सृष्टि में कहाँ-कहाँ घूमे, यह भी हम लोगों को पता नहीं है; अनन्त योनियों में हम लोग गये हैं | यह जीव अनादि है, 'अनादि' अर्थात् यह पता नहीं कि कब से इसका आरम्भ है | हमलोग कब से जीव बने हैं, इसका कुछ पता नहीं है और अनन्त योनियों में हम लोग घूमते आये हैं | अनन्त ब्रह्मांडों में हम लोग गये, वहाँ हमारा जन्म हुआ, मरे फिर जन्म हुआ | पता नहीं किस-किस योनि में हम लोग गये, फिर भी यहाँ 'बरसाने में' आ गये हैं; यहाँ क्यों आये हैं ? यह 'श्रीराधारानी' की कृपा है | यदि पूछा जाए कि क्या यह 'भगवान्' की कृपा है ? तो उत्तर है नहीं, क्योंकि स्वयं 'भगवान्' भी जिनकी कृपा चाहता है, 'भगवान्' भी जिन 'श्रीराधारानी' की कृपा पाने के लिए उनकी किंकरियों की चाटुकारिता करते हैं –

यत् किंकरीषु बहुशः खलु काकुवाणी
नित्यं परस्य पुरुषस्य शिखण्डमौलेः |
तस्याः कदा रसनिधेर्वृषभानुजाया –
स्तत्केलिकुञ्ज भवनाङ्गणमार्जनीस्याम् ||

(श्रीराधासुधानिधि -७)

परम पुरुष भगवान् 'श्रीकृष्ण' जो सिर पर मयूरपंख धारण करते हैं, वे भी जिनकी सहचरियों व दासियों की चाटुकारिता (चापलूसी, दासता) करते हैं; उन वृषभानुनंदिनी 'श्रीराधारानी' की मैं 'किंकरी' बन जाऊँ, यही मेरी कामना है; 'किंकरी' बनने से क्या होगा ? 'किंकरी' बनने से सहज में ही परम पुरुष हमारी चाटुकारी करेंगे कि मुझे श्रीजी से मिला दो | जब भगवान् श्यामसुंदर भी चापलूसी करते हैं तो फिर और देवी-देवताओं की तो छोड़ दो | स्वयं 'परब्रह्म' भी तुम्हारी चापलूसी करेगा; इसलिए ऐसे दिव्य 'बरसाने' में हमलोग श्रीजी की कृपा से आ गये हैं | बिजली की धारा आती-जाती रहती है, किन्तु 'श्रीजी की कृपा' कभी नहीं जाती है | बिजली की धारा तो आयेगी-जायेगी किन्तु 'श्रीजी की कृपा' एकरस चलती है, वह कभी घटती नहीं है; हमलोग उस कृपा के लिए 'बरसाने' में आये हैं, आये नहीं अपितु उनकी कृपा लायी है; हमलोगों की यहाँ आने की सामर्थ्य नहीं थी | अनादिकाल से हमलोग इस भवसागर में घूम रहे हैं | केवल 'श्रीजी की कृपा' ही हमें यहाँ लायी है; इस बरसाने में स्वयं 'श्रीकृष्ण' भी 'श्रीजी की सखी-सहचरी' बनना चाहते हैं | इस 'बरसाने' में 'राधारानी की कृपा' ही जीव को लाती है, अन्य कोई जीव का साधन यहाँ नहीं ला सकता है | ऐसा अवसर ब्रह्माण्ड में फिर कभी नहीं मिलेगा; इसीलिए मैंने यहाँ की वक्त्री 'मुरलिकाजी व श्रीजी' से प्रार्थना किया कि तुम लोग 'श्रीराधासुधानिधि' ग्रन्थ पर बोलो; इन दोनों ने मेरी बात को मानकर आज से ही शुरू कर दिया | राधासुधानिधि की कथा एक ऐसा रसमय विषय है कि वह कभी पुराना नहीं होता है क्योंकि

'रस' साक्षात् ब्रह्म है, उसके बारे में जितनी बार सुनोगे, उतनी ही तुम्हारी धारणा पुष्ट होगी |

वेदों के अनुसार कलियुग में मनुष्य की आयु सौ वर्ष है, अब तो सौ साल भी कोई नहीं जीता | इसीलिए मैंने इन दोनों साध्वियों (मुरलीजी व श्रीजी) से निवेदन किया कि तुम दोनों कथा करती हो तो 'श्रीराधासुधानिधि' पर ही बोलो; क्योंकि ये ब्रजवासिनी हैं, हमसे बड़ी हैं; मेरा जन्म तो ब्रज के बाहर हुआ था परन्तु ये लोग तो जन्म से ही ब्रजवासी हैं, इसलिए इनका बोलने का अधिकार मुझसे अधिक है | यहाँ सैकड़ों बालिकाएँ हैं जो देश के विभिन्न प्रान्तों से आयीं हैं | यहाँ तक कि विदेशों से भी लोग यहाँ 'बरसाने धाम में' आते हैं | अनन्त ब्रह्माण्डों में घूमता हुआ 'जीव' यहाँ आया है और उसे 'राधारानी का यश' मिले, यह मेरी इच्छा है और उस इच्छा को श्रीजी पूर्ण कर रहीं हैं | श्रीभगवान् का रस कभी पुराना नहीं होता क्योंकि भगवान् कभी पुराने नहीं होते | श्रीभगवान् तो अनादिकाल से हैं और नित्य नवीन व नित्य ही रसमय हैं | ये अवश्य है कि श्रीकृष्ण का अवतार साढ़े पाँच हजार वर्ष पूर्व हुआ था तो ऐसा लगता है कि 'श्रीकृष्ण' साढ़े पाँच हजार वर्ष पुराने हैं किन्तु नहीं, 'ब्रह्म' कभी पुराना नहीं होता, नित्य नवीन रहता है; यह उस 'भगवान्' की विशेषता है, उसके बारे में जब भी कहोगे, वह नवीन है, मीठा है, मधुर है | रसमय जिसका स्वरूप है – "रसो वै सः" भगवान् क्या है ? वेदों में कहा गया कि वह 'रस' है, उस 'रस' को प्राप्त करके जीव अनन्तकाल के लिए आनन्दमय हो जाता है – **"रसं ह्येवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति |"** इसलिए राधासुधानिधि की कथा सदा कहते-सुनते रहो क्योंकि जब तक वह परम वस्तु प्राप्त नहीं हो जाती, तब तक हमको आजीवन उसके बारे में कहना है, आजीवन सुनना है और उसी की याद में शरीर छोड़ना है, उसके बाद उन्हीं की प्राप्ति होती है | यह निश्चय है कि जन्म-मरण का प्रभाव भक्त के ऊपर नहीं पड़ता है | हमलोग निश्चय ही एक दिन मर जायेंगे क्योंकि यह संसार का नियम है, अतः निश्चित मरेंगे – **"संसृति इति संसारः, गच्छति इति जगत्"** – जो सदा चलता रहता है, वह संसार है; जो जाता रहता है, वह जगत है; यहाँ आज तक कोई भी सदा बैठा नहीं रहा, न बैठेगा; वह जायेगा, अवश्य ही जायेगा | हम सब लोग एक दिन जायेंगे | जब तक जिसकी आयु है, भगवान् की इच्छा से वह रहेगा लेकिन जाने से पहले उसकी प्राप्ति करना चाहते हैं जो शाश्वत अविनाशी पद है 'ब्रह्म' यानि 'भगवान्' | 'ब्रह्म' माने जो सबसे बड़ा है, उसे 'ब्रह्म' कहते हैं; उससे बड़ा न कोई था, न है, न होगा; वह रसमय है | 'श्रीराधारानी की कृपा' से ये दोनों देवियाँ (मुरलिकाजी, श्रीजी) राधासुधानिधि की कथा कहती रहेंगी और यहाँ लगभग सवा सौ साधिकाएँ सतत साधनरत हैं, धीरे-धीरे ये सब इसी दिव्य रस (श्रीराधारस) का प्रचार करेंगी और इस तरह सारे विश्व में राधारानी की कृपा फैलेगी ...|

सबसौं सुन्दर है बरसानों ब्रज में राधारानी कौ ||

जहाँ बिराजैं राधारानी,
जाकी श्याम करैं अगवानी,
महिमा वेदन हू नाय जानी,
पर्वत ऊपर मन्दिर चमकै सब जग जानी कौ |
खोर साँकरी बड़ी रसीली,
दधि लै चलीं कुँवरि गरबीली,
सखियाँ संग में बहुत हठीली,
आगे मोहन गैल रोक दियौ रूप लुभानी कौ |
दैजा दान कुँवरि रसिया कौ,
पीत पिछोरी कटि कसिया कौ,
कुँवरि हँसी लखि मन बसिया कौ,
घूँघट में ते छीन लियौ मन वा मनमानी कौ |
गहवरवन की लता-पतन में,
बिहरें राधा मोहन वन में,
फूले-फूले तन में मन में,
बड़े-बड़े सुर-नर-मुनि तरसैं या राजधानी कौ ||

(बाबाश्री द्वारा रचित रसिया)

गौ-सेवाराधन से सर्वकाम सुलभ

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'गौ-महिमा' (२६/८/२०१२) से संकलित

इस संसार में सब कुछ प्राप्त करने का, लोक-परलोक प्राप्त करने का साधन 'गौ-सेवा' है | संसारी कामनायें जैसे- धन-सम्पति, मान-सम्मान, राज्य आदि - ये सब तो छोटी चीजें हैं | 'गौ-सेवा' से साक्षात् भगवान् की प्राप्ति सहज हो जाती है | एकबार राजा ऋतम्भर ने जाबालि ऋषि से पूछा – "विष्णोप्रसादो गोश्चापि .....|" महाराज ! 'गौसेवा' कैसे की जाय ?" ऋषिवर ने कहा कि हे राजन् ! आप 'गाय' को 'जौ' खिला दो, जब वह गोबर करेगी तो 'जौ' निकल आएगा, उस जौ का संग्रह करके, उसी का भोजन करो; ये 'गौसेवा-व्रत' है | जब गाय चर ले और जल पी ले, तब तुम जल पियो और रात में मच्छर आदि गाय को न सतावें, इस पर ध्यान रखो; रात में तुम दोनों पति-पत्नी क्रम से जागो और उसकी रक्षा करो |

ऋतम्भरजी ने 'गौ-सेवा-व्रत' किया; वह गाय को जौ खिलाते थे | गाय को जौ खिलाने पर वह गोबर में निकलता है, उस जौ को बीनकर उसकी चाहे रोटी बना लो, चाहे दलिया बना लो, उसे उबालकर खा लो तो रोग क्या, रोग का मूल पाप भी नष्ट हो जाएगा | यह बात केवल पुस्तकों में ही नहीं पढ़ी गयी है बल्कि हम लोगों ने नित्यानन्दजीमहाराज (मानमन्दिर से जुड़े हुए एक प्रसिद्ध महात्मा) के जीवन में यह घटना देखी है | नित्यानंदजी अक्सर बीमार रहा करते थे, उनसे किसी ने कहा कि आप यह 'गौसेवा-व्रत' कीजिये, उन्होंने कई महीनों तक यह व्रत किया और इसका यह परिणाम हुआ कि उनके सब रोग समाप्त हो गये जबकि उन रोगों का दूर होना असम्भव-सा था | बहुत दिनों तक वे महात्मा स्वस्थ होकर जीवित रहे और बहुत दिनों बाद उनका निधन हुआ | यह बात केवल पुस्तकों की ही नहीं है, अनुभव की है |

कोई असाध्य रोग है तो वह भी इस 'गौसेवा-व्रत' से दूर हो जाता है क्योंकि इससे पाप जल जाते हैं | पाप ही रोग बनता है | मनुष्य के जीवन में आपत्तियाँ, अनेक प्रकार के संकट और शरीर में बीमारियाँ पिछले पापों के कारण आती हैं | 'गौसेवा-व्रत' एक ऐसा व्रत है जो पाप नष्ट कर देता है, जो समस्त रोगों का मूल है |

'ऋतम्भरजी' राजा होकर भी जंगल में गाय चराते थे, जब संध्या को घर लौटते थे तो उनकी रानी गाय की आरती करती थी; रात भर दोनों पति-पत्नी गाय की रक्षा के लिए क्रमशः जागते थे |

एक दिन की बात है कि 'ऋतम्भरजी' गाय चराते समय जंगल की शोभा देख रहे थे, उसी समय जंगल में एक सिंह आया और उसने गाय को दबा लिया, गाय चिल्लाने लग गई, इतने में शेर ने गाय को मार दिया | राजा ने सोचा कि मुझे गौ-हत्या लग गई है, अतः वह जाबालि ऋषि के पास गये, जिन्होंने 'गौसेवा' सिखायी थी, उनके पास जाकर वह रोने लग गये | राजा ने कहा –

गयोर्वैनिष्कृतिर्नास्ति पापपुञ्ज व्रतोस्तयो |
गत्या गौ वध कर्तुश्च नराज्ञा विनिन्दितु || (पद्मपुराण)

"हे ऋषे ! मैं तो धर्म करने गया और उल्टे मुझे पाप लग गया तो अब मैं इस पाप से कैसे छूटूँ ? आप मुझे गौहत्या का कोई प्रायश्चित बताइए, क्योंकि मैं वन की शोभा देख रहा था और गाय मारी गई तो दोष मेरा ही है |"

(यह गौशाला चलाने वालों के लिए बहुत अच्छी प्रेरणाप्रद कथा है, क्योंकि गौसेवा करते समय प्रायः अपराध होते रहते हैं |)

जाबालि ऋषि ने कहा –

भज श्रीरघुनाथं त्वं कर्मणामनसागिरा |
नैष्कापट्येन लोकेशं कुयश्च महामते ||

"हे राजन् ! गौसेवा में असावधानी के कारण तन-मन-वचन से हुए अपराधों को भक्तों से साफ-साफ बताकर संकीर्तन करना चाहिए; इस प्रकार निष्कपट भक्ति ही सबके पापों को नष्ट करती है | गौहत्या तुमको लग गई है तो इससे छूटने के लिए तुम विशुद्ध भक्ति करो |"

श्रीमद्भागवत में लिखा है –

ब्रह्महा पितृहा गोघ्नो मातृहाऽऽचार्यहाघवान् |

श्वादः पुल्कसको वापि शुद्ध्येरन् यस्य कीर्तनात् ||

(श्रीमद्भागवतजी ६/१३/८)

श्रीभगवान् का कीर्तन करने से मातृ-हत्या, पितृ-हत्या, आचार्य-हत्या आदि सब बड़े-बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं | जाबालि ऋषि ने राजा से कहा कि निष्कपट भाव से 'भगवान्, भक्तों व गायों' की सेवा करो | राजा ने निष्कपट भाव से सेवा-आराधना की, उससे हत्या तो मिट ही गई और एक सत्यवान नामक भक्त पुत्र का जन्म हुआ, जबकि उनके भाग्य में पुत्र नहीं था | भक्तिपूर्वक गौ-सेवा करने से असम्भव काम भी सम्भव हो जाते हैं; ये बात पद्मपुराण की इस कथा से सिद्ध हो जाती है | गौ-सेवा से सृष्टि का कल्याण होता है | गौसेवा 'भगवान्' से मिला देती है लेकिन होनी चाहिए गौ- सेवा, उसको जो व्यपार बना लेता है, वह अपना नाश कर लेता और देश का भी नाश कर देता है | च्यवन ऋषि ने कहा है कि जिस देश में गाय निर्भय होकर घूमती है, उस देश के सब पाप को गायें जला देती है, सारे देश का मंगल करती हैं | ब्रज में कृष्णलीला का यही सबसे बड़ा प्रमाण है; यहाँ कंस के साथी इतने अधिक असुर थे कि उनकी गिनती नहीं है | कृष्ण के पैदा होते ही छठे दिन पूतना आयी, उसके बाद शकटासुर, तृणासुर, बकासुर, अघासुर आदि अनेकों असुर ब्रज को नष्ट करने के लिए आये | तृणासुर आँधी बनकर आकाश में उड़ा, एक असुर दावाग्नि बनकर आया कि मैं ब्रज को जला दूँगा; इन असुरों ने पृथ्वी को दूषित कर दिया था, जल दूषित कर दिया कालियनाग ने | 'ब्रज' के सभी पञ्चतत्त्व दूषित हो गये थे परन्तु ब्रजवासियों की गौ-सेवा ऐसी थी कि सारे ब्रज में किसी का कुछ नुक्सान नहीं हुआ, कोई ब्रजवासी नहीं मरा और कालियनाग के विष से जो मरे भी थे, उन सबको श्रीकृष्ण ने जीवित कर दिया; ब्रज में कोई दुर्घटना नहीं हुई; यहाँ ऐसे-ऐसे असुर आये, जिन्होंने पृथ्वी को हिला दिया था - धेनुकासुर आया, उसके आभास से पृथ्वी हिलने लग गई थी, ऐसा लगा कि सारा ब्रज नष्ट हो जायेगा लेकिन कुछ नहीं हुआ | भगवान् ने सारे ब्रज में ऐसा रस बरसाया, जैसे- रास, महारास आदि ब्रजलीला के लिए प्रसिद्ध हो गया |

जो लोग सच्चे भाव से गौ-सेवा कर रहे है, जो सच्ची गौशालायें हैं, वे सारे देश का कल्याण कर रही हैं और जो व्यापारी हैं, वे देश का नुक्सान कर रहे है, इसीलिए गौ-धन सबसे बड़ा धन माना गया है | भारतवर्ष में सदा से गौधन सबसे बड़ा धन था | भगवान राम ने दस करोड़ गायें दान में दी थीं | भागवत में राजा नृग के बारे में लिखा है कि जितनी वर्षा की बूँदें हैं, इतनी गाय उन्होंने दान की थीं | जब श्रीरामजी को वनवास हुआ तो उन्होंने त्रिजट नामक ब्राह्मण को बुला कर कहा कि तुम डंडा फेंको, जहाँ तक तुम्हारा डंडा जायेगा, उतनी गायें ले लो क्योंकि वे जानते थे कि हम वन में जा रहे हैं, वहाँ विपत्तियाँ आएँगी और गौ-सेवा से ही आपत्तियाँ दूर होती हैं | त्रिजट ब्राह्मण को रामजी ने गायें दान में दीं | यहाँ तक कि सीताजी भी जब वन जाते समय यमुना पार हो रही थीं तो उन्होंने सोचा कि आगे न जाने कितने आपत्तियाँ आएँगी | श्रीवाल्मीकि रामायण में लिखा है कि जब नाव यमुनाजी के बीच में पहुँची तो सीताजी ने यमुनाजी की स्तुति की थी – **कालिन्दी मध्यमायाता सीता त्वेनामवन्दत |**
स्वस्ति देवी तरामि त्वां पारयेन्मे पतिर्व्रतम् ||
यक्ष्ये त्वां गोसहस्रेण सुराघटशतेन च |
स्वस्ति प्रत्यागते रामे पुरीमिक्ष्वाकुपालिताम् ||

(वाल्मीकिरामायण, अयोध्याकाण्ड ५५/१९,२०)

जब यमुनाजी के ठीक बीच में नाव पहुँची तो सीताजी खड़ी हो गयीं और उन्होंने यमुना मैया की वन्दना की - "हे देवी ! मैं तुम्हारे ऊपर से जा रही हूँ, मेरे पातिव्रत की रक्षा करना और जिस समय मैं वन से लौटकर अयोध्या कुशल से आऊँगी, उस समय एक हजार गायों का दान करूँगी और तुम्हारी पूजा करूँगी |" सीताजी ने यमुनाजी से यह मान्यता माँगी थी; ऐसा वाल्मीकि रामायण में उल्लेख है; वन से लौटने पर उन्होंने वही किया |

श्रीशत्रुघ्नजी को प्रभु श्रीरामजी ने मथुरा का राजा बनाया और सीताजी ने यमुनाजी से जो मान्यता माँगी थी, उसे पूरा किया... |

श्रीयुगलरसमय 'यमुनाजी'

श्रीयमुनाजी के बारे में शास्त्रों में कहा गया है कि यमुना-जल में श्रीराधामाधव का अंगराग बहता है | हम लोग गाते हैं – **ब्रजाधिराजनन्दनाम्बुदाभ गात्र चन्दनानुलेप गन्धवाहिनीं भवाब्धिबीजदाहिनीम् |** (श्रीहितहरिवंशजी कृत यमुनाष्टक)

भवसागर का बीज जलाने वाली श्रीयमुना हैं और उसमें राधामाधव का अंगराग बहता है किन्तु यमुनाजी में जाकर देखो तो वहाँ गटर बह रहा है | यमुना की ऐसी दुर्दशा देखकर किसको कष्ट नहीं होता है और यदि कष्ट होता है तो फिर हम क्रिया क्यों नहीं करते हैं | हमारे मध्य संगठन की आवश्यकता है, हमलोग एक बार संगठित होकर उठें...| जब भारत स्वतंत्र हुआ तो जवाहरलाल नेहरु ने बड़े-बड़े बाँध बनाने शुरू किये थे, जैसे - भाखड़ा नागल बाँध आदि; उस समय मेघनादशाह नामक एक इन्जीनियर था, उसने नेहरुजी से कहा कि आप ये सब बाँध आदि मत बनाइए, इससे बड़ा खतरा है, कोई शत्रु देश इन पर बम बरसा सकता है, जिससे बहुत अधिक हानि हो सकती है; इसके स्थान पर आप नदियों को बहुत गहरा खोदिये...| यही मत हमारी श्रीमद्भागवत का भी है | भागवत के दशम स्कन्ध में यमुना जी का वर्णन करते हुए कहा गया है – **अगाधतोयह्रदिनीतटोर्मिभिर्द्रवत्पुरीष्याः पुलिनैः समन्ततः | न यत्र चण्डांशुकरा विषोल्बणा भुवो रसं शाद्वलितं च गृह्णते ||** (श्रीमद्भागवतजी १०/१८/६)

कैसी यमुनाजी हैं ? 'अगाधतोयह्रदिनी' जिनमें अगाध जल भरा हुआ है | 'ह्रद' उसको कहते हैं जहाँ पाताल तक पानी पहुँच जाता है, जैसे - कालिय ह्रद, नाग ह्रद | अब 'ह्रद' तो क्या यमुनाजी को पाँव से पैदल चलकर पार किया जा सकता है क्योंकि पानी ही नहीं है | क्या यह यमुनाजी हैं ? यदि कहा जाए कि सिंचाई के लिए यमुना बँट गयी तो बँट जाने दो | यमुनाजी को इतना गहरा खोदो जिससे कि वह इतनी गहरी हो जाए कि ह्रद बन जाए | जैसा कि भागवत के उपरोक्त श्लोक में वर्णन है – 'अगाधतोयह्रदिनीतटो' उसका तटबन्ध बना दो और फिर देखो कि जल बिल्कुल भी दूषित नहीं होगा |

भगवान् श्रीकृष्ण जब पाण्डवों के दूत बनकर कौरवों के पास हस्तिनापुर गये थे तो उन्होंने धृतराष्ट्र से एक नीति वाक्य कहा था – **अनायका विनश्यन्ति विनश्यन्ति बहुनायका | कुनायका विनश्यन्ति तरिष्यन्ति सुनायका ||** तुम्हारा उज्जवल वंश है | वस्तुतः जब बहुत से नायक होते हैं तब समाज नष्ट हो जाता है क्योंकि कोई कहता है पूरब चलो, कोई कहता है पश्चिम चलो, कोई कहता है उत्तर चलो तो कोई दक्षिण चलने की कहता है | कुनायक, जिसके कारण राजतंत्र समाप्त हुआ, उसके कारण भी समाज नष्ट हो जाता है | बहुनायक वाला समाज भी नष्ट हो जाता है और अनायक (जिस समाज में कोई नायक न हो ऐसा) समाज भी नष्ट हो जाता है | जो वोट के लिए भीख माँगता है, वह क्या शासन करेगा ? अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि हम लोग मिलकर काम करें | सबसे पहले तो यमुनाजी के बारे में एक बीड़ा उठावें यानि वृन्दावन के साधु-संत, महन्त-मंडलेश्वर आदि वैष्णवजन संगठित हो जाएँ | मैंने सुना है कि वृन्दावन में अरबों रुपयों की बिल्डिंग बन रहीं हैं | हम लोग केवल सरकार के ऊपर क्यों आश्रित रहते हैं ? सब लोग संगठित होकर एक कोष स्थापित करें और फिर स्वयं यमुनाजी को गहरा खोदकर दिखा दें | वृन्दावन के ही प्रसिद्ध संत हरि बाबा ने अंग्रेजों के शासनकाल में अकेले ही बाँध बनाया था | गंगाजी में बाढ़ आ जाती थी, उससे सैकड़ों गाँव नष्ट हो जाते थे, बहुत नुकसान होता था; पहले उन्होंने अंग्रेज शासकों से मदद माँगी तो उन्होंने मना कर दिया और कहा कि हम बाँध नहीं बनायेंगे | तब बिना सरकारी मदद के स्वयं ही उन्होंने बाँध बनाकर दिखा दिया | मैं तो कुछ नहीं हूँ, राधारानी ही मेरा निर्वाह करतीं हैं, वे ही हमारी ब्रजयात्रा चलातीं हैं, जबकि मेरे पास न बैंक बैलेंस है, न कोई पैसा है | लेकिन मैं सच कहता हूँ क्योंकि मानमन्दिर द्वारा ब्रज के बहुत से कार्य हुए - अनेकों कुण्ड खोदे गए जो कि एक बहुत असम्भव कार्य था, जैसे - गोमती गंगा का जीर्णोद्धार असम्भव कार्य था, पावन सरोवर का शोधन अति कठिन था, किन्तु श्रीजी की कृपा से ये सब कार्य हुए | बरसाना में श्रीजी के मंदिर का विस्तार कर उसका पुनर्निर्माण कार्य हमारे मानगढ़ से हुआ था; इन सब घटनाओं को देखकर मुझे ऐसा लगता है कि यमुनाजी का कार्य भी होगा... अवश्य होगा... | इससे अधिक मैं क्या कहूँ, बस मैं यही आशीर्वाद लेने वृन्दावन आया था | सच्चे मन से मैं परम पूज्य पंडित रामकृष्णदासमहाराजजी को यही श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ, इनकी कृपा से भारतवर्ष स्वतंत्र हुआ, इनकी कृपा से ब्रज में बड़े-बड़े कार्य हुए और इनकी कृपा से ही यमुनाजी का कार्य भी अवश्य पूर्ण होगा |

सरल-सरस साधन 'श्रीयुगलमन्त्र-आराधन'

बाबाश्री के सत्संग (१६/७/२०१२) से संकलित

किसी ने प्रश्न किया कि मानमन्दिर पर सब लोग 'युगल-मन्त्र' का कीर्तन करते हैं, 'युगल मन्त्र' का शास्त्रीय प्रमाण क्या है ? ऐसा प्रश्न बहुत से लोग प्रायः करते हैं, क्योंकि 'महामन्त्र' का प्रमाण है 'कलिसन्तरणोपनिषद्' और 'सूर्यपुराण' | कलिसन्तरणोपनिषद् में महामन्त्र का इस प्रकार उल्लेख है – **हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे |**

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ||

चैतन्य महाप्रभु ने इसे स्वीकार नहीं किया क्योंकि यह उपनिषद् का मन्त्र है | उपनिषद् 'वेद' है और वेद में सबका अधिकार नहीं है, स्त्री और शूद्र का वेद-उपनिषद् में अधिकार नहीं है | इसीलिए चैतन्य महाप्रभु ने पौराणिक मन्त्र लिया – **हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे |**

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ||

इसमें सबका अधिकार है - स्त्री हो, शूद्र हो, कैसा भी पापी क्यों न हो, 'हरे कृष्ण' महामन्त्र में सबका अधिकार है | इसीलिए बहुत से लोग मुझसे पूछा करते हैं कि आपके यहाँ युगलमन्त्र का कीर्तन किया जाता है तो क्या युगल-मन्त्र का कोई शास्त्रीय प्रमाण है अथवा यह मनगढ़ंत है ? मैंने कहा कि बिना प्रमाण के तो हम लोग चलते नहीं हैं किन्तु जो हठी हैं, उसके लिए कोई प्रमाण नहीं है; जो जिज्ञासु है, उसके लिए प्रमाण है | पद्मपुराण में युगलमन्त्र का प्रमाण है | पद्मपुराण के पातालखण्ड के अनुसार भगवान् श्रीकृष्ण ने शिवजी को युगलमन्त्र प्रदान किया था (गीता प्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित संक्षिप्त पद्मपुराण के पृष्ठ संख्या – ५७३ पर इसे कोई भी देख सकता है) | पहले भगवान् शंकर ने अपने श्रीमुख से स्वयं यह कहा है कि समस्त मन्त्रों में 'युगलमन्त्र' ही ग्राह्य है, इसमें राधारानी उपास्य हैं | वृन्दावन के रसिक लोग महामन्त्र से प्रेम नहीं करते हैं क्योंकि इसमें (स्पष्ट रूप से) राधा नाम नहीं है, इसीलिए वृन्दावन में रसिक संतों ने 'युगलमन्त्र' अपनाया है | शिवजी ने नारदजी को युगलमन्त्र के बारे में बताया था | एकबार नारदजी ने शिवजी को प्रणाम करके पूछा – "हे महादेवजी ! मुझको वह मन्त्र बताइये, जिससे मैं भगवान् की अन्तरंग लीलाओं का अधिकारी बनूँ |" शिवजी ने कहा कि हे महाभाग नारद ! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया है, इससे संसार का कल्याण होगा | मैं तुम्हें 'मन्त्रचिन्तामणि' का उपदेश दे रहा हूँ; यद्यपि यह बहुत गोपनीय है, लेकिन तुम्हें बताऊँगा | भगवान् कृष्ण के दो अत्यन्त उत्तम मन्त्र हैं; जिनके पर्यायवाची नाम हैं - 'मन्त्रचिन्तामणि, युगलद्वय व पञ्चपदी' |

पहला मन्त्र है – **"गोपीजनवल्लभचरणान् शरणं प्रपद्ये |"** यह मन्त्र पाँच पदों का है, इसका नाम 'मन्त्रचिन्तामणि' है, इसमें सोलह अक्षर हैं |

दूसरा मन्त्र है – **"नमो गोपीजनवल्लभाभ्याम् |"** यह दो पदों व दस अक्षरों का पञ्चपदीमन्त्र (मन्त्रचिन्तामणि, युगलद्वय) है, जो मनुष्य पञ्चपदी का संकीर्तन करता है, वह कृष्ण का सान्निध्य प्राप्त करता है | अन्य मन्त्रों में पात्र, अपात्र, देश, काल का नियम है किन्तु इस मन्त्र में कोई नियम नहीं है; न इसमें पुरश्चरण की आवश्यकता है, न न्यास की और न ही शोधन की आवश्यकता है |

हे नारद ! ब्राह्मण से लेकर चाण्डाल तक सभी मनुष्य इस युगलमन्त्र के अधिकारी हैं | स्त्रियाँ, शूद्र, जड़, मूक, अंधे, पंगु, हूण, किरात, पुलिन्द, पुल्कस, आभीर, यवन, खस, कंक आदि पाप योनियाँ हैं; ब्रह्महत्यारे, महापातकी, उपपातकी, ज्ञान-वैराग्य से हीन आदि सबका 'युगलमन्त्र' में अधिकार है | जिसकी श्रीकृष्ण में भक्ति है, वह युगलमन्त्र का अधिकारी है, बिना भक्ति वाला इसका अधिकारी नहीं है; कृतघ्न, नास्तिक और श्रद्धाहीन को इस मन्त्र का उपदेश नहीं करना चाहिए | गुरुद्रोही को भी युगलमन्त्र नहीं देना चाहिए | इस युगलमन्त्र का ऋषि मैं (शंकरजी) ही हूँ | (वैष्णवानां यथा शम्भुः) | 'श्रीकृष्ण' युगलमन्त्र के देवता हैं | एकबार के भी युगलमन्त्र के उच्चारण से मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है | हे द्विजश्रेष्ठ ! अब मैं इस मन्त्र का ध्यान बताता हूँ | वृन्दावन के भीतर

कल्पवृक्ष के मूल में रत्नमय सिंहासन पर भगवान् श्रीकृष्ण अपनी प्रिया श्रीराधा के साथ बैठे हैं, राधारानी वाम भाग में हैं | श्रीकृष्ण का विग्रह श्याम (नील) है, उनके शरीर पर पीताम्बर है, उनकी दो भुजायें हैं, गले में वनमाला है, सिर पर मोरपंख का मुकुट हैं, करोड़ों चंद्रमाओं से अधिक वे कान्तिमान हैं, ललाट पर चन्दन, कानों में कुण्डल और बीच में कुंकुम बिंदु के तिलक हैं, दोनों कुण्डलों के कारण वे सूर्य के समान तेजस्वी दिखाई दे रहे हैं, उनके कपोल (गाल) शीशे की तरह स्वच्छ हैं, जिस पर छोटी-छोटी स्वेद बिन्दुएँ प्रतीत हो रही हैं | श्रीकृष्ण के नेत्र प्रियाजी के मुख को एकटक निहार रहे हैं, उनकी ऊँची नासिका के अग्र भाग में मोती सुशोभित है, कुंदरू के फल के समान उनके लाल अधर हैं, विशाल भुजाओं में केयूर, अंगद आदि आभूषण हैं, उँगलियों में मुँदरियाँ हैं, बाँयें हाथ में मुरली है, दाहिने हाथ में कमल है, करधनी की प्रभा से शरीर जगमगा रहा है, नूपुरों से चरण शोभित हो रहे हैं | श्यामसुंदर क्रीडारस के आवेश में चंचल हैं, नेत्र चपल हैं, वे अपनी प्रिया राधा को हँसाते हुए उनके साथ हँस रहे हैं; युगलमन्त्र का उच्चारण करते समय श्यामसुंदर की इस छबि का चिंतन करना चाहिए | (श्रीकृष्ण के बाद राधारानी की अष्ट सखियों का वर्णन किया गया है |) नारदजी ! श्रीकृष्ण प्रिया श्रीराधा अपनी विभूतियों से इस प्रपंच का गोपन अर्थात् संरक्षण करतीं हैं, इसलिए उन्हें 'गोपी' कहते हैं; कृष्ण की आराधना में तन्मय होने के कारण वे 'राधिका' कहलाती हैं, श्रीकृष्णमयी होने से वे परदेवता हैं; मनीषीजन इन्हें ह्लादिनीशक्ति कहते हैं | 'श्रीराधा' ही महालक्ष्मी हैं और भगवान् 'श्रीकृष्ण' ही आदि नारायण हैं, इसमें थोड़ा भी भेद नहीं है; अधिक क्या कहा जाए, दोनों की सत्ता दोनों के बिना नहीं है | बिना 'कृष्ण' के राधा नहीं हैं और 'राधा' के बिना कृष्ण नहीं हैं, इनकी विभूतियों को मैं सौ करोड़ वर्षों तक गिनूँ तब भी गिन नहीं सकता | तीनों लोकों में जम्बूद्वीप श्रेष्ठ है और उस जम्बूद्वीप में भी भारतवर्ष श्रेष्ठ है | भारत में भी मथुरापुरी श्रेष्ठ है, उसमें भी वृन्दावन श्रेष्ठ है, उसमें भी गोपियों (सखियों) का समुदाय व उसमें भी 'श्रीराधिकरानी' सर्वश्रेष्ठ हैं | श्रीकृष्ण के सबसे निकट होने के कारण श्रीराधारानी का महत्त्व सबसे अधिक है; यही वे राधिका हैं जो 'गोपी' कही गयी हैं और सखियाँ 'गोपीजन' कहलातीं हैं | सखियों के समुदाय के दो ही प्रियतम हैं – राधा और कृष्ण; इन दोनों के चरण ही इस जगत में शरण देने वाले हैं | शिवजी कह रहे हैं कि मैं अत्यन्त दुःखी जीव हूँ और उनका आश्रय लेता हूँ, मैं उन्हीं की शरण में पड़ा हुआ हूँ, शरण में जाने वाला जो कुछ भी मैं हूँ तथा मेरी कही जाने वाली जो भी वस्तु है; वह सब राधारानी और श्रीकृष्ण को समर्पित है, सब कुछ उन्हीं के लिए है | इस प्रकार मैंने "गोपीजनवल्लभचरणान् शरणं प्रपद्ये |" – इस मन्त्र के अर्थ का वर्णन किया, इसके पाँच पर्याय हैं |

शिवजी बोले – "नारद ! यह मैंने तुमको 'युगलमन्त्र' का प्रारम्भ बताया, अब इसकी दीक्षा का वर्णन करता हूँ | 'युगलमन्त्र' के केवल श्रवणमात्र से ही मनुष्य भवबन्धन से छूट जाता है | साधारण कीट से लेकर ब्रह्मा तक सम्पूर्ण जगत विनाशी है | सभी सुख अनित्य हैं, दुःखमय हैं | इसलिए ब्रह्मलोक तक के सुखों से विरक्त होकर के भवबन्धन से छूटने के उपायों का विचार करे | संसार असत्य है |" इस प्रकार शिवजी ने बहुत बड़ा उपदेश दिया और कहा कि सत्य केवल 'राधाकृष्ण की शरण' है | मनुष्य को चाहिए कि गुरुजनों के पास जाकर 'युगलमन्त्र' को ग्रहण करे | 'गुरुभक्त' को युगलमन्त्र फल देता है | रासपंचाध्यायी में भी भगवान् ने कहा है कि गुरुद्रोही और कृतघ्न को 'कृष्णप्रेम' नहीं मिलता है | इसके बाद दीक्षा कैसे होनी चाहिए, इसका विशाल विवरण किया गया | तिलक लगावे और दोनों मन्त्रों को ग्रहण करे | शिवजी अंत में बोले कि कलियुग के मनुष्य इस युगलमन्त्र के आश्रय से भगवान् के धाम में पहुँच जायेंगे | प्रतिदिन शरणागति कैसे बढ़े, इसका विचार करे, लोक-परलोक की चिंता मत करो | इसके बाद सखीभाव का वर्णन किया गया | अंत में महादेवजी एक रहस्य की बात कहते हैं कि मैंने भगवान् श्रीकृष्ण से यह रहस्य सुना था | मैं कैलाश पर्वत पर एक सघन वन में भगवान् नारायण का ध्यान कर रहा था और उनका जप कर रहा था | एकबार भगवान्

नारायण प्रकट हुए और बोले – 'शम्भो ! वर माँगो |' मैंने आँख खोला तो देखा कि लक्ष्मीजी के साथ 'भगवान्' गरुड़ पर विराजमान हैं; मैंने उन्हें बारम्बार प्रणाम किया और नारायण भगवान् से बोला – 'कृपासिन्धो ! जिसको ब्रह्म या पुरुष कहते हैं, उसको मैं आँखों से देखना चाहता हूँ |' लक्ष्मीपति भगवान् नारायण ने कहा – 'महादेव ! तुम उस दुर्लभ वस्तु ब्रह्म या पुरुष को आँखों से देखना चाहते हो परन्तु वह मायिक इन्द्रियों द्वारा ग्राह्य नहीं है किन्तु फिर भी तुम यमुना के पश्चिमी तट पर चले जाओ, जहाँ वृन्दावन है, वहाँ तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी |' ऐसा कहने के बाद भगवान् नारायण अन्तर्धान हो गये | फिर मैं यमुना के किनारे आया, वहाँ मुझको उस सनातन पुरुष के दर्शन हुए जिसको ब्रह्म कहते हैं | भगवान् श्रीकृष्ण अपनी प्रिया राधा के कंधे पर अपना बाँयां हाथ रखे हुए थे, उनके चारों ओर गोप-गोपियों का समुदाय था | श्रीकृष्ण 'श्रीराधा' के साथ हँस रहे थे, मुझको देखकर वे बोले – हे रुद्र ! तुम्हारा मनोरथ जानकर आज मैंने तुमको दर्शन दिया, इस समय तुमने यह मेरा अलौकिक रूप देखा, यह निर्मल प्रेम का पुंज है, इसके रूप में सत्, चित् और आनन्द मूर्तिमान हैं; उपनिषदों के समूह मेरे इसी रूप को निर्गुण, निराकार, व्यापक, निष्क्रिय और परात्पर बताते हैं | मेरे दिव्य गुणों का अंत नहीं है, उन गुणों को कोई सिद्ध नहीं कर सकता, इसीलिए वेद मुझे 'निर्गुण' कहते हैं; मेरा यह रूप चर्म चक्षु के द्वारा नहीं देखा जा सकता, इसलिए वेद मुझे अरूप या निराकार कहते हैं | मैं अपने चैतन्य अंश से सर्वत्र व्यापक हूँ, इसीलिए विद्वान् लोग मुझे 'ब्रह्म' के नाम से पुकारते हैं | भगवान् कृष्ण आगे बोले कि मैं इस प्रपंच (संसार) का कर्ता नहीं हूँ, इसलिए वेद मुझे निष्क्रिय बताते हैं | गीता में भी भगवान् ने कहा है – मैं सब कुछ करने वाला भी हूँ किन्तु अकर्ता हूँ, सारा संसार मैंने बनाया किन्तु मैं अकर्ता हूँ क्योंकि ये कर्मफल मुझे लिप्त नहीं करते, मैं कहीं भी आसक्त नहीं होता हूँ, न मेरी कहीं स्पृहा है; जो ऐसा जानता है, वह कर्म से बाँधा नहीं जाता है |

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः |
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ||
न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा |

(श्रीगीताजी ४/१३,१४)

यही उपदेश यहाँ शिवजी को भगवान् ने दिया |

श्रीकृष्ण ने आगे कहा कि मेरा यह रूप गुप्त है | जो गोपी-भाव से मेरी उपासना करता है, वही मुझे पा सकता है | एकबार जो हम दोनों (श्रीराधामाधव) की शरण में आ जाता है अथवा केवल मेरी प्रिया (श्रीराधा) की शरण में आ जाता है, वह अवश्य मुझे प्राप्त हो जाता है; इसका अभिप्राय यही है कि केवल अकेली 'श्रीराधारानी' की भी उपासना हो सकती है; ऐसा स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है | 'युगल-उपासना' माने दोनों राधाकृष्ण की उपासना |

श्रीकृष्ण बोले – "जो मेरी शरण में आकर कहता है कि मैं आपका हूँ, वह बिना साधन के मुझे प्राप्त कर लेता है | मेरी प्रिया राधारानी की शरण ग्रहण करना चाहिए |

हे रुद्र ! मेरी प्रिया राधारानी की शरण लेने पर तुम मुझे अपने वश में कर सकते हो | जो राधारानी का आश्रय लेता है, वह मुझे वश में कर लेता है | तुम मेरे युगलमन्त्र का आराधन करते हुए सदा मेरे इस धाम में निवास करो |" शिवजी कहते हैं कि ऐसा कहने के बाद भगवान् श्रीकृष्ण ने मेरे दाहिने कान में युगलमन्त्र का उपदेश दिया –

राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे |
राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे ||

इस प्रकार युगलमन्त्र का उपदेश देने के बाद मेरे देखते ही देखते भगवान् श्रीकृष्ण वहाँ से अन्तर्धान हो गये | तब से मैं निरन्तर युगलमन्त्र की आराधना करता हूँ | सूतजी कहते हैं कि इसके बाद नारदजी ने मुझको युगलमन्त्र का उपदेश किया | इसके अनन्तर सूतजी ने समस्त ऋषियों को युगलमन्त्र का उपदेश किया | शौनकजी ने सूतजी से कहा कि गुरुदेव ! आपकी कृपा से युगलमन्त्र मुझे भी प्राप्त हो गया | सूतजी बोले कि तुम लोग भी युगलमन्त्र से दिन-रात संकीर्तनमय आराधन करो, इससे थोड़े ही दिनों में श्रीराधामाधव के दास्यभाव की प्राप्ति हो जाएगी | मैं भी यमुना के तट पर श्रीभगवान् के प्रेममय धाम श्रीवृन्दावन में जा रहा हूँ...| श्रीमहादेवजी के मुख से निकला हुआ यह चरित्र बड़ा ही अद्भुत है; इसके श्रवण-कथन से सहज ही रसोपासना की प्राप्ति हो जाती है |

'सुदैन्य' से ही परम संतृप्ति

बाबाश्री के सत्संग (१/२/२०१०) से संग्रहीत

यदि कोई आदमी कहता है कि मैं ब्राह्मण हूँ, मैं क्षत्रिय हूँ, मैं वैश्य या शूद्र हूँ तो ये सब बातें गलत हैं;
श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी ने तो इस सम्बन्ध में बहुत अच्छी बात कही है – **नाहं विप्रो न च नरपति-र्नापि वैश्यो न शूद्रो, नाहं वर्णी न च ग्रहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा | किन्तु प्रोद्यन्निखिलपरमानन्दपूर्णामृताब्धे - र्गोपीभर्त्तुः पदकमलयोर्दास-दासानुदासः ||**

(पद्यावली - ६३)

मैं ब्राह्मण नहीं हूँ, मैं क्षत्रिय नहीं हूँ; न मैं वैश्य हूँ, न शूद्र हूँ | कोई कहता है कि मेरा विवाह नहीं हुआ, अतः मैं ब्रह्मचारी हूँ – यह भी गलत है, यह सब मोह है; ऐसा सोचना कि हम गृहस्थ हैं, यह भी गलत है; हम वानप्रस्थ हैं – यह भी गलत है; हम सन्यासी हैं, ऐसा सोचना भी गलत है; ये सारी बातें गलत हैं, यह केवल मोहमात्र है | जितनी भी कल्पित अहंतायें हैं, ये सब मोह है | जीव इसे समझ नहीं पाता है और इस मोह से ग्रसित रहता है | 'मैं-मेरापन' मोह है | जैसा कि ऋषभ भगवान् ने कहा है कि विवाह हुआ, मैथुनी भाव स्थापित हुआ तो उससे नया मोह, नयी अहंता, नई ममता चल पड़ती है – मैं दूल्हा, ये मेरी दुल्हिन; फिर दूसरी अहंता बदल जाएगी – ये मेरी माँ, ये मेरा बेटा; ये सब अहंतायें बदलती रहतीं हैं; ये सब मोह है; जितनी प्रकार की अहंतायें हैं, ये मोह है | हम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हैं – ये सब मोह है | 'हम ब्रह्मचारी, हम गृहस्थी, तुम बाबाजी' ये सब मोह है | तो फिर तुम कौन हो ? तो महाप्रभुजी कहते हैं कि हम गोपीकान्त भगवान् के दासों के दास हैं यानि श्रीकृष्णदास हैं या दासानुदास हैं; हमारा वास्तविक स्वरूप यही है | आत्मदर्शन में हम शुद्ध 'आत्मा' हैं, जहाँ शरीर के धर्म नहीं हैं | मदालसा जैसी माताएँ संसार में सुदुर्लभ हैं | माँ मदालसा बालकों को पढ़ाती थीं – **शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरञ्जनोऽसि संसारमाया परिवर्जितोऽसि | संसारनिद्रां त्यज स्वप्नरूपां मदालसा वाक्यमुवाच पुत्रम् ||** (मार्कण्डेयपुराण)

हे पुत्रो ! तुम शुद्ध हो, नित्य मुक्त हो, आनन्दमय हो, इसलिए संसार की झूठी (असत्, अविद्या) माया को सर्वथा छोड़कर सपने की तरह मोह रूपी नींद से जागकर भक्तिमय प्रकाश में निरन्तर चलते रहो ...| इस प्रकार विशुद्ध विवेक उत्पन्न करके माता मदालसा अपने बच्चों की मोह की नींद खोल देती थीं; इसलिए आज तक ऐसी माँ दुनिया में कोई नहीं हुई | मदालसा एक ऐसी रानी का नाम है जिसके जैसी माँ आज तक कोई नहीं हुई | मदालसा ने प्रतिज्ञा किया था कि मेरी कूँख में जो भी पुत्र आयेगा, वह पुनः किसी गर्भ में नहीं जायेगा, वह मुक्त हो जायेगा | भारतवर्ष में बड़ी विचित्र-विचित्र भक्तिमयी मातायें हुईं हैं | दुनिया में हर माँ चाहती है कि मेरे बेटा-बेटी का विवाह हो किन्तु मदालसा ऐसी नहीं थी, वह संसार से अलग ढंग की माँ थी | संसार में जितने भी माता-पिता हैं, वे चाहते हैं कि हमारी संतान भी हमारी तरह गृहस्थ का सुख ले किन्तु मदालसा इन सबसे अलग थी | मदालसा ने यह प्रतिज्ञा की थी कि मेरे गर्भ में जो पुत्र आएगा, उसे पुनः किसी स्त्री के गर्भ में नहीं जाना पड़ेगा यानि उसको किसी की सेवा की आवश्यकता नहीं थी कि बेटा-बहू आकर मेरी सेवा करें; ऐसी कामना तो संसार में साधारण स्त्रियों के मन में होती है, सभी माँ-बाप के मन में ऐसी ही कामना रहती है, वे संतान से सेवा की आशा करते हैं; ये उनका अज्ञान है, वे इसलिए आशा करते हैं क्योंकि उनके अन्दर यह अहंता होती है कि हम माँ हैं, बाप हैं; यह कल्पित अहं है और जब बेटा सेवा नहीं करता तो माँ-बाप कल्पित अहं के कारण दुःखी होते हैं | अपने अज्ञान को लोग नहीं देख पाते हैं | वास्तव में सब हत्या की जड़ आसक्ति है जो असद् अहं से पैदा होती है – चाहे माँ की आसक्ति हो, चाहे बेटा की आसक्ति हो, चाहे बहू की आसक्ति हो, चाहे पति की आसक्ति हो, चाहे गुरु जी की शिष्य में आसक्ति हो, जितनी भी आसक्तियाँ हैं; ये सब जीव के अन्दर एक भूख पैदा करतीं हैं, तृष्णा पैदा करतीं

हैं | आसक्ति जहाँ पैदा हुई, वहाँ तुम्हारे अन्दर भूख पैदा हो जायेगी | आसक्ति और तृष्णा दोनों एक साथ पैदा होते हैं; ये दोनों जुड़वाँ संतानें हैं | जुड़वाँ संतान में भी वे आगे-पीछे निकलते हैं किन्तु ये दोनों एक साथ निकलते हैं | इसके बारे में भगवान् ने गीता में कहा है –

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् |
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् || (गीता १४/७)

तृष्णा और आसक्ति एक साथ पैदा होते हैं | आसक्ति है तो तृष्णा पहले पैदा हो जाएगी – चाहे वे पिता जी हों, चाहे माताजी हों, चाहे पतिजी हों, चाहे बहूजी हों, चाहे कोई भी हो, चाहे गुरुजी हों | गुरु को असंग होना चाहिए | जहाँ भी संसार में जिसकी आसक्ति है, वह भूख पैदा कर देती है, तृष्णा (प्यास) पैदा कर देती है | माँ की आसक्ति अपने बेटे में है तो उसे देखना चाहती है कि बेटा मेरे पास आये, मेरे पास बैठे क्योंकि वह भूखी है | किसी की कहीं भी आसक्ति है, जैसे - स्त्री की पति में आसक्ति है तो वह उससे कहेगी कि मेरे पास ही बैठो; अपना कुटुंब, माता-पिता, भाई-बहन आदि सबको छोड़ दो | आसक्ति और तृष्णा एक ही चीज है | पति की आसक्ति स्त्री में है तो वह भी चाहता है कि यह मेरे अलावा संसार में अन्य किसी को न देखे; यह जीव-स्वभाव है, ऐसा निश्चित है अर्थात् इस नियम को कोई काट ही नहीं सकता | जब मनुष्य आसक्ति छोड़ देता है, उसी समय वह सदा के लिए तृप्त हो जाता है, उसकी भूख मिट जाती है, यह (आसक्ति मिटने की) पहचान है | किसी की किसी में आसक्ति है तो भले ही वह ऊपर से अपने त्याग को दिखावे किन्तु भूख भीतर है तो उस भूख को कितना भी छिपाओ, वह छिपती नहीं है | गीता में इस बात को भगवान् ने कहा है –

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः |
(श्रीगीताजी -४/२०)

संसार के जितने भी सम्बन्ध हैं, वे फल हैं | फलासक्ति छोड़ दिया, उसकी पहचान है नित्य तृप्त हो जाना | 'तृप्ति' माने भूख समाप्त हो गयी | अब किसी को देखें, उसके साथ बैठें, उससे बात करें, ये सारी बातें समाप्त हो गयीं; इसकी एक ही पहचान है कि तृप्ति आ जाती है, नित्य तृप्ति आ जाती है | थोड़ी देर के त्याग का पाखंड दिखाने से ये बात नहीं होती है | जितना अधिक व्यक्ति त्याग का पाखण्ड करता है, इसका मतलब है कि उतनी ही अधिक उसके भीतर भूख है | श्रीभगवान् उपरोक्त श्लोक में कहते हैं कि आसक्ति छूट गयी, इसकी पहचान है कि मनुष्य नित्यतृप्त हो जाता है, अब उसको किसी को देखने की, किसी से बोलने की अथवा किसी भी प्रकार के सम्पर्क की इच्छा नहीं होती है क्योंकि उसके अन्दर तृप्ति आ गयी अर्थात् भूख समाप्त हो गयी | तृप्ति आ गयी, इसकी भी पहचान क्या है ? इसकी पहचान है - निराश्रय अर्थात् फिर वह किसी भी जीव का आश्रय नहीं लेता है | भूख तुमको जीवाश्रय लेने को विवश करेगी | किसी छोटे बच्चे में यदि तुम्हारी आसक्ति है तो उसके पास जाकर तुम उसको गोद में लेकर खिलाओगे, उसके साथ हँसोगे, बोलोगे | जहाँ भी भूख होती है, वहाँ वह जीवाश्रय पैदा कर देती है; इस तरह भगवद्-आश्रय नष्ट हो जाता है और जीव इसे समझ नहीं पाता है; यह बड़ी सूक्ष्म बात है |

जैसे – भगवान् ने अर्जुन से कहा कि तू तो समझ रहा है कि मैं दया कर रहा हूँ किन्तु यह दया नहीं है, वह तो तुम्हारी एक भूख है, ऊपर से वह चादर अनेक प्रकार का रूप ओढ़ लेती है; कभी दया का चादर ओढ़ लेती है, कभी द्वेष का चादर ओढ़ लेती है, कभी कोई चादर ओढ़ लेती है | वस्तुतः जब मनुष्य निराश्रय हो जाता है अर्थात् उसका जीवाश्रय समाप्त हो जाता है, तब उसको किसी से यह जरूरत नहीं होती कि तुमने मेरे पत्र का जवाब नहीं दिया अथवा मैं तुम्हारा इंतजार करता रहा परन्तु तुम नहीं आये; ये सब जीवाश्रय की बातें हैं | यदि जीवाश्रय बना हुआ है तो इसका यही मतलब हुआ कि भीतर अभी भूख है, तृप्ति नहीं है | भूख होने का अभिप्राय यही है कि अभी तुम्हारी आसक्ति है, ये सब सम्बन्ध एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं | कोई आदमी कितना भी प्रयत्न करे किन्तु उसके विकार छिपते नहीं हैं | 'त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गम्' – फलासक्ति नष्ट होने का परिणाम यही होता है कि तुम नित्यतृप्त हो गये, उसकी पहिचान है कि निराश्रय हो गये, जीवाश्रय समाप्त हो गया | अतः यह जितना भी आसक्तियों

का, सम्बन्धों का जाल है; ये सब मोह है क्योंकि इसका आघात स्मृति पर होता है | क्रोध करोगे तो स्मृति पर आघात होता है, क्रोध से सम्मोह पैदा होता है | काम भाव से मिथुनी भाव स्थापित करोगे तो यह भी मोह पैदा करेगा | **"जनस्य मोहोऽयमहं ममेति"** (श्रीभागवतजी ५/५/८) जैसा कि ऋषभ भगवान् ने कहा कि मोह ही नये ढंग की अहंता-ममता पैदा करता है – मैं इसका गुरु हूँ, यह मेरा चेला है, यह मूर्ख मेरी सेवा नहीं करता है | मैं बाप हूँ फिर भी मेरा बेटा मेरी सेवा नहीं करता, यह मूर्ख-नालायक लड़का है – इस तरह की बातें सोचना मोह है | तुम दूसरे के मोह को तो देखते हो किन्तु अपने मोह को नहीं देखते हो | 'शिष्य' सेवा नहीं कर रहा है, यह तो गुरुजी को दिखायी पड़ रहा है लेकिन उनको ये नहीं दिखाई पड़ता है कि हमारे भीतर सेवा की इच्छा अथवा भूख क्यों पैदा हुई ?

जो गुरु करै शिष्य की आस |
श्याम भजन से भया उदास ||

यह महापुरुषों ने लिखा है कि 'गुरु' यदि शिष्य से आशा करता है तो भक्ति से वह विमुख हो जाता है |

मोर दास कहाइ नर आसा |
करिअ तो कहिअ कहा बिस्वासा ||

नर आशा करने वाले का भगवान् के प्रति विश्वास का महल गिर गया | अब वह भगवान् का भक्त नहीं रहा | तुम चेले की आशा करते हो तो भगवान् से विमुख हो गये |

भगवतरसिकजी ने लिखा है –

पैसा पापी साधु को छुअत लगावै पाप |
विमुख करै गुरु इष्ट सों उपजावै संताप ||

'पैसा' तुम्हें गुरु और भगवान् से विमुख कर देगा | तुम सेठों का आश्रय लोगे और अपने मन में समझोगे कि हम दया कर रहे हैं, इसकी सेवा ले रहे हैं तो इसको कृतार्थ कर रहे हैं; इस तरह प्राणी भगवान् से विमुख हो जाता है |

उपजावै संताप ज्ञान वैराग्य बिगारै |
काम क्रोध मद मोह लोभ मत्सर संवारै ||
सब द्रोहिन सो परै भक्त द्रोहि नहीं ऐसा |
भगवत रसिक अनन्य भूलि जिन परसो पैसा ||

इसीलिए भगवान् ने गीता में कहा कि जिस आदमी ने फलासक्ति को छोड़ दिया, वह सदा तृप्त है, वह बिना कहे संसार का गुरु बन गया और तृप्ति नहीं है तो बिना कहे चेला बन जाओगे, सेठ की जूती चाटोगे | सेठ तुमको ऊपरी हिसाब से दण्डवत करेगा – गुरुजी दण्डवत और फिर कहेगा महाराजजी ऐसा होना चाहिए और तुम उससे कहोगे – हाँ, जैसा तुम कहोगे, वैसा ही होगा |

जब लगि मन में कामना, जग गुरु जोगी दास |

जब मन में कामना रहेगी तो संसार तुम्हारा 'गुरु' बन जायेगा और तुमको नचाएगा; तब जोगी महाराज को दास बनकर नाचना पड़ेगा क्योंकि उनके हृदय में कामना थी, आसक्ति से काम पैदा होता है; इससे विपरीत स्थिति है –

जब नहीं मन में कामना, जोगी गुरु जग दास ||

अब 'जोगी' गुरु बन गये और 'संसार' दास बन गया क्योंकि अब जोगी के भीतर कामना नहीं रही |

इसीलिए भगवान् ने कहा कि निराश्रय अर्थात् संसार का आश्रय तभी छूटेगा जब तुम्हारे अन्दर तृप्ति पैदा हो जाएगी | जब तक आसक्ति है, तृप्ति पैदा नहीं होगी |

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः |

इसमें कार्य-कारण भाव एक-दूसरे में है | पहले फलासक्ति का त्याग होगा, तब नित्यतृप्ति आयेगी | यह रोटी खाकर रसगुल्ला खाने वाली तृप्ति नहीं है, यह तो क्षणिक है | खूब रसगुल्ले खा लिए, पेट भर गया तो कहने लगे – वाह, हम तो तृप्त हो गये, यह नित्यतृप्ति नहीं है | थोड़ी देर बाद शौच जाओगे तो शाम को कहोगे कि एक कटोरा रसगुल्ला और लाओ |

लेटर बक्स है पेट हमारा |
जो कुछ डालो होता गायब,
पेट हमारा बना अजायब,
ऐसा लम्बा लेट हमारा ||

इस तरह रसगुल्ला खाकर तृप्त होना 'नित्य तृप्ति' नहीं है | जैसे मनुष्य 'भोग' भोग लेता है, फिर थोड़ी देर बाद स्त्री-पुरुष दोनों ही सो जाते हैं क्योंकि वह क्षणिक तृप्ति थी | नित्य तृप्ति अलग होती है; जब आसक्ति मिटती है, तब वह (नित्य तृप्ति) होती है | हम लोग क्षणिक-तृप्ति को ही 'तृप्ति' मान लेते हैं | जब आसक्ति मिटती है, तब नित्यतृप्ति आती है, फिर उस समय मनुष्य 'सांसारिक जीवों का आश्रय' ग्रहण नहीं करता है |

संत-सेवी 'श्रीकपूरजी'

बाबाश्री के सत्संग (१९/१२/२००९) से संकलित

कपूरजी एक भक्त हुए हैं, उनका छोटा-सा चरित्र है; ये बड़े दयामय संत थे | संत तो संसार से असंग ही होते हैं; संसार में भी वे पद्म पत्र की भाँति रहते हैं, सांसारिक वस्तुयें उन्हें व्यापती नहीं हैं |

एक बार कपूरजी कहीं जा रहे थे तो उन्होंने किसी संत को देखा, उनके पाँवों में बिवाई फटी थी | जाड़े में पाँव फट जाता है तो कभी-कभी खून निकलता है, उससे बड़ा कष्ट होता है | जिसके पास जूता या चप्पल न हो और पाँव फटे हों, वह यदि चलेगा तो उसके पाँवों से खून निकलेगा | कपूरजी ने देखा कि उन संत के पाँव में बिवाई फटी है और खून निकल रहा है तो उन्होंने उनसे पूछा – महाराज ! बड़ा आश्चर्य है, आपको इतना कष्ट है तो क्या आप जूता नहीं पहन सकते ? क्या किसी ने इतना कष्ट देखकर भी आपको जूता नहीं दिया ? कपूरजी की बात सुनकर संत बोले – कपूरजी ! जूता देने वाले बहुत हैं | ऐसा नहीं है कि मुझको जूता प्राप्त नहीं हुआ इसलिए मैं जूता नहीं पहनता | मैंने एक नियम ले रखा है, इसीलिए मैं जूता नहीं पहन रहा हूँ | कपूरजी ने पूछा – महाराज ! क्या नियम है ? संतजी ने कहा – जब तक मैं एक सहस्र संतों को भोजन नहीं करा दूँगा, तब तक मैं जूता नहीं पहनूँगा; ऐसा नियम मैंने लिया था किन्तु आज तक वह पूरा नहीं हो पाया |

कुछ महात्मा बड़े विचित्र होते हैं | बहुत सालों पहले मान मन्दिर पर एक साधु आये थे, वे सबसे बहुत प्रेम करते थे; अचानक उनके मन में ऐसा विचार आया कि 'मारुति' गाड़ी पर बैठना चाहिए | उस समय भारत में मारुति गाड़ी नयी-नयी चली थी | उनके मन में ऐसी मौज आई कि कहने लगे कि अब तो मैं मारुति पर बैठकर ही बरसाने में आऊँगा और ऐसा कहकर वह यहाँ से चले गये | भगवान् की ऐसी लीला हुई कि आज तक वह बरसाना नहीं आ सके ...|

अस्तु, कपूरजी से वे संत बोले कि एक हजार साधु-संतों को भोजन कराने के बाद ही मैं जूता पहनूँगा | मुझे जूता देने वाले तो बहुत लोग मिले किन्तु मैं क्या करूँ, मैंने ये नियम ले रखा है | कपूरजी गरीब भक्त थे, वे गृहस्थ थे; उन्होंने संतजी से कहा – "महाराज ! आप दो-चार दिन मेरे घर विराजिये; देखिये, प्रभु क्या करते हैं ?"

कपूरजी ने अपनी गृहस्थी की सारी संपत्ति बेच दी और एक हजार भक्तों को भोजन कराया, उसके बाद उन संत के चरणों को धोकर, उनकी बिवाई का उपचार करके उनको जूता पहना दिया; इस प्रकार से भक्तों की सेवा करने के लिए कपूरजी सर्वात्मभाव से समर्पित थे | हमारा 'संतजनों' के प्रति जितने अंश में अनुराग (प्रेम, स्नेह) होगा, उतना ही उनकी सेवा करने का भाव हमारे हृदय में उत्पन्न होगा | विशुद्ध भक्ति की पहिचान ही साधु-संतों की सेवा है | सच्चे संत की पहिचान स्वयं श्रीभगवान् ने कही है, जिसे भगवतरसिकजी ने अपने एक पद में गान किया है – **इतने गुन जामें सो संत |**

श्रीभागवत मध्य जस गावत, श्रीमुख कमलाकंत |
हरि कौ भजन साधु की सेवा, सर्वभूत पर दाया |
हिंसा, लोभ, दंभ, छल त्यागै, विष सम देखै माया ||
सहनसील, आसय उदार अति, धीरज सहित बिबेकी |
सत्य बचन सबसों सुखदायक, गहि अनन्य ब्रत एकी ||
इंद्रीजित, अभिमान न जाके, करै जगत कों पावन |
भगवतरसिक तासु की संगति, तीनहुँ ताप नसावन ||

भगवान् कहते हैं कि अगर तुम इतने बड़े पापी भी हो कि विश्व द्रोह करके आये हो, परन्तु यदि तुम मेरी शरण में आ जाओ तो तुरन्त उसी समय क्षमा कर दिये जाओगे ।

'सत्संगमय संकीर्तन' से निर्विकारता

बाबाश्री की हस्तलिखित प्राचीन पुस्तिका से संकलित

संसार के प्राणियों के लिए 'गोपियों के प्रेम-रति' को समझना कठिन है, यहाँ तक कि ये गोपीभाव ब्रह्मादि देवताओं की भी बुद्धि के बाहर का विषय है | आजकल अधिकतर उपदेष्टा आचार्य, कथावाचक आदि भी बहिर्मुख दिखाई देते हैं; कीर्ति, कामिनी और कंचन – ये तीन ही उनके अभीष्ट लक्ष्य बन गये हैं; यद्यपि ये लोग श्रीकृष्ण को अपना इष्ट बताते हैं किन्तु इनके अन्दर इष्टता की गंध भी नहीं है | 'कथा' बड़ी पवित्र वस्तु है, इसे व्यापार न बनाकर विशुद्ध भक्ति के प्रचार-प्रसार के लिए ही कहनी-सुननी चाहिए | इस गन्दी दुनिया से पार जाने के लिए पवित्रता का मार्ग (विशुद्ध भक्ति-पथ) ही अपनाना होगा | कीच से कीच नहीं धोयी जाती है | कीच धोने के लिए शुद्ध पानी ही चाहिए | 'अँधेरा' अँधेरे को दूर नहीं कर सकता, उसे भगाने के लिए प्रकाश ही चाहिए | प्रभु की कृपा-ज्योति से ही मदनान्धकार दूर होगा | मैं स्वयं यदि रात्रि को वीरभाव के साथ कीर्तन न करूँ तो मेरे ऊपर भी काम रूपी मद चढ़ जाएगा क्योंकि उसका नाम ही है 'मदन' अर्थात् मद करने वाला | वीरभाव की साधना से ही काम विकार को जीता जा सकता है; मैं तो इसी कारण से पहले प्राणायाम, व्यायाम आदि करता था, कभी-कभी निराहार रहता था, किन्तु अब इन सबकी पूर्ति भक्तिपथ के अनुकूल वीर आवेश में कीर्तन करने से हो जाती है | प्रायः कथाकारों के अंतःकरण में भक्ति का प्रकाश न होने से ही वे गड़बड़ सिद्धांत श्रोताओं के दिमाग में भर देते हैं क्योंकि 'अंधा' अंधे को क्या मार्ग दिखा सकता है ? इस अँधेरी नगरी से दूर जाने के लिए भास्कर मार्ग (भक्ति-पथ) पर ही चलो | कल्मष से पार जाने के लिए पवित्रता की नौका लो | मन के विकारों को नाश करने के लिए वीर भाव की तलवार उठा लो | जैसा कि भगवान् ने गीता में अर्जुन से कहा –

जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम्| (श्रीगीताजी ४/४३)

हे अर्जुन ! तू काम रूपी इस शत्रु को मार डाल, इसकी हत्या कर दे, इसका सिर उड़ा दे, इसका गला घोंट दे और फिर जब इस दुष्ट काम की आँखें बाहर निकल आयें तो तलवार से इसका सिर काट दे |

ब्रजगोपियाँ वीर थीं | नंददासजी ने लिखा है –

नाद अमृत को पंथ, रंगीलो सूक्ष्म भारी |
तेहि मग ब्रज तिय चलें, आन न कोई अधिकारी ||

यह प्रेममय भक्तिमार्ग अत्यन्त सूक्ष्म है; इसको स्थूल, पाशविक बुद्धि नहीं समझ सकती | इस रसमयी उपासना को वैकारिक, विषपूर्ण हृदय नहीं जान सकता | जब अपना एक-एक रोम ब्रजराज श्रीकृष्ण के लिए ही है तो फिर इस दुष्ट काम को अपना शरीर देकर जो लोग अलौकिक प्रेम की ऊँची-ऊँची बातें करते हैं, वे दोहरा अपराध करते हैं – १. आत्मनाश २. आत्मवंचना | अपने नाश को न समझना, उसे छिपाना और दूसरों को भी नाशकारक सिद्धांत को समझाकर अपने अहंकार रूपी राक्षस को बढ़ा-बढ़ाकर प्रभु से बहिर्मुख हो जाना | उस अहंकार का यह रूप होता है कि अन्य लोग कामी हैं, उनकी क्रिया में काम है और हम भक्त हैं, हमारी क्रिया में प्रेम है; इस धोखे में नहीं रहना चाहिए | अपनी कमी यदि हम दूर न कर सकें तो कम से कम इतना तो ईमानदारी से अवश्य समझ लेना चाहिए कि हममें यह कमी है और भगवान् से प्रार्थना करनी चाहिए - हे प्रभु ! हे दीनबंधु ! मुझ शरणागत की दुर्बलता को आप दूर करें |

ब्रजगोपियों ने गोपीगीत में कितना आर्त्तनाद किया है | उन्होंने प्रारम्भ में ही दाबे के साथ कह दिया है कि हमारे मन और प्राण जगत के लिए नहीं हैं – **"त्वयि धृतासवः"** यह सब कुछ तो तुम्हारे लिए ही धारित है, अन्यथा इस शरीर का क्या कार्य ? अपना एक-एक रोम कृष्ण को दो, काम को नहीं | आवश्यकता पड़ने पर निराहार रह लो कात्यायनी व्रत के रूप में कि हमारा पति जो काम बन रहा है, इसके स्थान पर 'श्रीकृष्ण' पति मिलें |

भजन के चार विघ्न हैं – लय, विक्षेप, कषाय और विप्रतिपत्ति | 'लय' अर्थात् कथा-कीर्तन, जप आदि में निद्रा व आलस्य होना | 'विक्षेप' – मन एकाग्र न होकर अन्यत्र उड़ता रहे | 'कषाय' – जैसे कसैलेपन से दूध फट जाए; वैसे ही काम, क्रोध, राग-द्वेष आदि किसी एक दोष के घोर आक्रमण से मन अनवस्थित हो | 'विप्रतिपत्ति' – हरि, हरिजन आदि में अश्रद्धा हो जाना; यह सबसे बड़ा विघ्न है; जैसे - रोगों में राजयक्ष्मा (टी.बी.); इन दोषों के दूर करने के उपाय – 'लय' में खड़े होना आदि, 'विक्षेप' में उच्च स्वर से कीर्तन करना, 'कषाय' में सत्संग करना एवं गुरुजनों से स्वदोष कथन करना | 'विप्रतिपत्ति' में किसी तेजस्वी संत की अनवरत सेवा व संगति करना |

ऐसे कारण कभी-कभी बन जाते हैं जिससे भक्ति की मूल संपत्ति जो कि श्रद्धा-संपत्ति है, उसमें ठेस लगती है किन्तु पारमार्थिक (परमार्थ के पथिक) को विप्रतिपत्ति-दोष नहीं आने देना चाहिए | मेरा यह स्वार्थ नहीं है कि कोई मेरे पास आये किन्तु भजन के विघ्न से बचना चाहिए | किसी अन्य के दोष से अपने भीतर आसुरी अश्रद्धा को नहीं लाना चाहिए | सांसारिक आसक्ति क्या-क्या नाश नहीं करती है ? हम सभी अभी कच्चे साधक ही हैं | प्रभु ऐसी कृपा करें कि प्रतिक्षण श्रद्धा-संपत्ति बढ़ती जाए अन्यथा पारमार्थिकता दूर है | श्रद्धापूर्वक संत-शरणागति (सत्संग) से ही सद्ग्रन्थ व श्रीभगवान् का वास्तविक बोध होकर असली अनुराग होता है |

जे श्रद्धा संबल रहित नहिं संतन्ह कर साथ |
तिन्ह कहुँ मानस अगम अति जिन्हहि न प्रिय रघुनाथ ||

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड – ३८)

श्रीरामचरितमानस के प्रारम्भ में भी कहा गया है –

भवानी शङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरुपिणौ |
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तः स्थमीश्वरम् ||

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड, मङ्गलाचरण, श्लोक -२)

श्रद्धा-विश्वास के बिना जीव अपने अन्तःकरण में स्थित भगवान् को नहीं देख सकता |

.....

प्रबल मोह 'मैथुनी-आसक्ति'

बाबाश्री के सत्संग (१/२/२०१०) से संग्रहीत

ध्यायतो विषयान्पुंसःसङ्गस्तेषूपजायते |
सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ||

(श्रीगीताजी २/६२)

चिन्तन से आसक्ति होती है, आसक्ति से काम और काम से क्रोध की उत्पत्ति होती है |

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः |
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ||

(श्रीगीताजी २/६३)

क्रोध से सम्मोह उत्पन्न होता है और सम्मोह से स्मृति का नाश होता है, स्मृतिनाश से फिर बुद्धिनाश और बुद्धिनाश से सर्वनाश हो जाता है |

'मोह' का सीधा-सा अर्थ है - स्मृतिनाश | स्मृतिनाश किसी भी प्रकार से हो सकता है, अतः किसी भी प्रकार से मोह हो सकता है, केवल क्रोध से और केवल काम से ही नहीं | जैसे - अर्जुन ने कुरुक्षेत्र की रणभूमि में श्रीकृष्ण से कहा –**"पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः"**(श्रीगीताजी २/७) उस समय अर्जुन को 'धर्म' से मोह पैदा हो गया था | अतः किसी भी प्रकार से स्मृति-विभ्रम यानि मोह हो सकता है, उसके अनेक रास्ते हैं |

श्रुति के एक मन्त्र में कहा गया है – **आहार शुद्धौ सत्त्व शुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवास्मृतिः स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थिनां विप्रमोक्षः |** (छान्दोग्योपनिषत् ७/२६/२)

शुद्ध व युक्त आहार से अंतःकरण अपने आप शुद्ध हो जाता है और जब अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है तो ध्रुवा स्मृति (अखण्ड स्मृति) आ जाती है | 'ध्रुवास्मृति' माने कि फिर मोह कभी नहीं होगा | ध्रुवास्मृति के बाद फिर सभी गाँठें अपने आप खुल जातीं हैं, यह श्रुति वाक्य है, यह

वाक्य छोटा-सा ही है किन्तु बड़ा मार्मिक है | जब तक अंतःकरण गन्दा है, तब तक ध्रुवास्मृति नहीं आ सकती और संस्कारों का मल स्मृतियों में दौड़ता रहता है | संस्कार से ही वासना पैदा होती है, वासना से स्मृति और स्मृति में ही राग-द्वेष रहता है | अंतःकरण जब तक संशुद्ध नहीं है, तब तक स्मृति सम्पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं हो सकती और तब तक अविद्या की गाँठ नहीं कट सकती | हम जितने भी कर्म करते हैं, उन सबके संस्कार मल बनकर हमारे अंतःकरण में जमा हो जाते हैं | अनादिकाल से जीव कर्म कर रहा है तो अनन्त मल है | अन्तःकरण में तीन चीजें होती हैं – मल, विक्षेप और आवरण | राग-द्वेषादि मल हैं, ये चित्त में विक्षेप पैदा करते हैं, चंचलता पैदा करते हैं, मन को इधर-उधर फेंकते हैं | लड्डू खाया, बड़ा मीठा लगा तो फिर उसकी याद आयेगी, इससे मन में विक्षेप पैदा होगा; इसी प्रकार मैथुनी भोग है | पहले मनुष्य भोग को भोग लेता है, तब उसकी याद आती है | फिर वह विषय-सामग्री भोगे चाहे न भोगे, मन में विक्षेप उत्पन्न हो जाता है | तीसरा है - आवरण, जो अविद्या का आवरण है; इस प्रकार से ये तीन चीजें अंतःकरण में हैं, ये सब मोह है | मल भी मोह है, विक्षेप भी मोह है और आवरण भी मोह है | मोटी अक्ल से समझने के लिए उदाहरण है,

जैसे - मनुष्य विवाह करता है, फिर स्त्री-पुरुष का सम्पर्क होता है, उनके संपर्क से हृदय में जो मल जमा हुआ, उसे मिथुनीभाव कहते हैं, उस मिथुनीभाव से मोह पैदा हुआ; उस मोह की वैरायटी अलग-अलग थी | पुरुष सोचता है कि मैं भोक्ता हूँ, स्त्री सोचती है कि मैं भोग्या हूँ; इस प्रकार दोनों के अन्दर मोह पैदा हुआ, मोह की शैली अलग-अलग थी | पुरुष के अन्दर भोक्तृत्व भाव था, यों तो भोक्तृत्व भाव स्त्री में भी होता है, वह भी भोग भोगती है किन्तु व्यवहार में पुरुष भोक्ता माना जाता है और स्त्री भोग्या मानी जाती है; दोनों ही मोहग्रसित रहते हैं, यद्यपि दोनों की अहंता अलग है, दोनों की ममता अलग है, उसकी शैली भी अलग है | पुरुष की अहंता की शैली है कि मैं स्त्री का पति हूँ तथा स्त्री की अहंता की शैली है कि मैं इसकी पत्नी हूँ | अहंता के अनेक रूप होते हैं | बाप कहता है कि मैं बाप हूँ, बेटा कहता है कि मैं बेटा हूँ | स्त्री कहती है कि मैं पत्नी हूँ; ये सब अहंता के अनेक रूप हैं, अहंता बदलती रहती है | पहले जो कन्या थी, वह विवाह के बाद अपने को दुल्हिन समझने लगती है; यह कोई तर्क का विषय नहीं है; भगवान् ने इसे भागवत में खोला है, चाहे कोई इसे स्वीकार करे, चाहे न करे किन्तु 'सत्य' सत्य ही होता है; कोई इसे व्यर्थ का विषय समझता है तो समझता रहे परन्तु यह एक ऐसा सत्य है जिसे टाला नहीं जा सकता | श्रीमद्भागवत में ऋषभ भगवान् ने कहा कि स्त्री-पुरुष का 'मैथुनीभाव' मोह है |

पुंसः स्त्रिया मिथुनीभावमेतं तयोर्मिथो हृदयग्रन्थिमाहुः |
अतो गृहक्षेत्रसुताप्तवित्तैर्जनस्य मोहोऽयमहं ममेति ||

(श्रीभागवतजी ५/५/८)

स्त्री-पुरुष मिलते हैं तो इससे मिथुनीभाव पैदा होता है, निश्चित पैदा होगा, 'मिथुन' माने जोड़ा; अकेले में ऐसा भाव नहीं होता | स्त्री-पुरुष के मैथुनी भाव से उनके हृदय में गाँठ बन जाती है, 'गाँठ' इसलिए कहा क्योंकि इसके कारण लोग मर जाते हैं किन्तु यह मैथुनी-गाँठ नहीं खुलती है | इसी गाँठ के कारण मनुष्य अपने माँ-बाप को छोड़ देता है; गुरु, गोविन्द आदि सबको छोड़ देता है, यहाँ तक कि भोगासक्ति के कारण हत्या तक कर देता है; यह एक ऐसी विकट गाँठ है कि कोई कितना भी रोके, माँ रोके, बाप रोके किन्तु लड़का-लड़की नहीं रुकते हैं | इस विषय-भोग के कारण जीव कपट करता है, छिपकर मिलता है, छिपकर देखता है, सारे विकार इस मैथुनी-गाँठ के कारण आ जाते हैं | मैथुनीभाव के कारण गाँठ पड़ जाती है किन्तु वह दिखाई नहीं देती है, वह तो अंतःकरण के भीतर होती है | जिस प्रकार स्त्री-पुरुष संपर्क करते हैं तो इससे उनके संतान उत्पन्न होती है, वैसे ही इस गाँठ की भी बहुत-सी संतानें पैदा होती हैं, उनमें दो ही संतान मुख्य हैं और ये दोनों ही मोह हैं | स्त्री-पुरुष का विवाह होता है तो सबसे पहले उनको रहने के लिए मकान की आवश्यकता होती है | मकान के बाद फिर क्षेत्र (खेत) या जीविका की आवश्यकता होती है क्योंकि दोनों खायेंगे क्या, भूखे तो मरेंगे नहीं; उसके बाद बेटा-बेटी पैदा होंगे, उसके बाद

अन्य भी सास-ससुर आदि ससुराल के सम्बन्ध जुड़ते हैं | इसके साथ ही गृहस्थ का खर्च चलाने के लिए वित्त (पैसा) भी रखना पड़ता है, क्योंकि बीमार होने पर चिकित्सा के लिए पैसे की आवश्यकता होती है, कपड़े पहनने के लिए भी पैसे की जरूरत पड़ती है; ये सारी चीजें मोह पैदा करतीं हैं; मोह का बहुत व्यापक क्षेत्र है; अहंता भी मोह है और ममता भी मोह है क्योंकि इनसे स्मृति नष्ट हो जाती है | जैसे - श्रीमद्भागवत के पुरंजनोपाख्यान के अनुसार 'पुरंजन' मृत्यु के बाद अगले जन्म में स्त्री बना; तब उस जन्म में अविज्ञात सखा ने उसको समझाया और कहा कि तुम स्त्री नहीं हो, तुम्हारी अहंता झूठी है, हम दोनों सनातन सखा हैं | इसलिए हम स्त्री हैं, पुरुष हैं – यह अहंता झूठी है, यह मोह है | भागवत के चतुर्थ स्कन्ध में पुरंजन की कथा वर्णित है | इस जन्म में स्त्री में अत्यधिक आसक्ति होने के कारण वह अगले जन्म में स्त्री बना और किसी अन्य पुरुष के साथ उसका विवाह हुआ और जब उस पुरुष की मृत्यु हो गयी तो उसकी स्त्री बना हुआ पुरंजन सती होने के लिए चला | उस समय उसके सनातन सखा अविज्ञात ने उसको सती होने से मना किया और कहा कि तुम इस पुरुष की स्त्री नहीं हो, तुम्हारी अहंता झूठी है | मैं इसकी स्त्री हूँ, यह मेरा पति है, मैं इसका बाप हूँ, यह मेरा बेटा है – इस तरह की अहंतायें झूठी हैं | अविज्ञात सखा ने स्त्री बने पुरंजन से कहा कि हम दोनों सदा के सनातन सखा हैं | जब से तुमने मेरा साथ छोड़ दिया, तब से तुमने अनेकों सम्बन्ध जोड़े; वे सभी अहंतायें झूठी थीं | न तुम किसी की स्त्री हो और न ही तुम किसी के पति हो, न तुम किसी के बेटा हो, न तुम किसी की बेटी हो | इस तरह एक बहुत बड़ा ज्ञान इस उपाख्यान में अविज्ञात सखा ने पुरंजन को दिया कि अनेकों जन्मों में तुम्हारी जितनी भी अहंतायें थीं, वे सब झूठी थीं; बस यही मोह है | हम किसी के बाप हैं – यह मोह है, हम किसी के पुत्र हैं, यह मोह है | हम किसी की स्त्री हैं, यह मोह है | हम स्त्री के पति हैं, यह मोह है | यही बात पाँचवें स्कन्ध में ऋषभ भगवान् ने कही है कि स्त्री व पुरुष जब परस्पर मिलते हैं तो मिथुनी भाव उत्पन्न होता है और उसके बाद अहंता-ममता – ये मोह के दो रूप पैदा होते हैं | स्त्री कहती है कि मैं इसकी पत्नी हूँ तथा पुरुष कहता है कि मैं इसका पति हूँ; इस तरह एक मिथ्या अहंता पैदा हुई | अहंता है तो ममता भी अवश्य होगी कि यह मेरा है, यह मेरी है; यह मोह है | जितना भी मेरा-मेरी का चक्कर है, यह मोह है | इसीलिए अहंता से भी मोह उत्पन्न होता है एवं मोह से भी अहंता उत्पन्न होती है | दोनों एक ही चीज हैं, फिर 'मोह' शब्द अलग क्यों कहा गया ? इसका कारण यह है कि 'मोह' का सम्बन्ध 'स्मृति' से होता है; किस तरह की स्मृति आई ? मान लीजिये कामभाव आया | अब कामभाव से जो मोह होगा, वह दूसरे ढंग का होगा कि हम इसको भोगें; इस तरह की बात मन में आयेगी, इस तरह की अहंता उत्पन्न होगी | क्रोध से जो अहंता पैदा होगी तो मन में यह भाव आयेगा कि इसको हम मारें, इस तरह की अहंता पैदा होगी; ये सब चीजें स्मृति में आतीं हैं | कामजन्य मोह, क्रोधजन्य मोह, लोभजन्य मोह – इस तरह का जितना भी मोह है, यह स्मृति में टकराता है; इसीलिए सबके नाम अलग रखे गये हैं | ये सब समझना चाहिए कि हमारे अन्दर मोह क्यों उत्पन्न हुआ ? ये मेरी माँ है, ये मेरे पिता हैं – ये सब मोह है | भगवान् ने कहा कि शरीर पैदा होता है, आत्मा नहीं पैदा होती है | पैदा होने के बाद नाम रखा गया – यह सब मोह है | भगवान् ने गीता में कहा है –

न जायते म्रियते वा कदाचि –
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः |
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो-
न हन्यते हन्यमाने शरीरे || (श्रीगीताजी २/२०)

'आत्मा' न पैदा होती है, न मरती है; न पहले कभी यह पैदा हुई और न ही आगे कभी पैदा होगी, यह अज है अर्थात् कभी पैदा ही नहीं होती है, न इसकी कभी मृत्यु होती है | यह विनाशी शरीर मरता-जीता है, इसमें असत् अहं की वृत्तियाँ ही हमारी स्मृति को दूषित करती हैं | मायिक विकार 'अहंता-ममता, राग-द्वेष इत्यादि' नष्ट होने पर शुद्ध स्मृति (श्रीभगवत्स्मृति) का आविर्भाव हो जाता है |

श्रीभक्ति के संप्रचारक 'आचार्यजन'

श्रीमुरलिकाजी के सत्संग से संकलित

निरुक्त में महामुनि यास ने लिखा है – "**पुरुष विद्या नित्युत्तम संपत्तिं कर्म वेदो मन्त्रः |**" - (इस श्लोक के दो अर्थ हैं |) दो पुरुष हैं – एक तो जीवात्मा रूपी पुरुष, जो इस नौ द्वार वाले देह रूपी पुर में रह रहा है और एक पुरुष सम्पूर्ण विश्व रूपी पुर में रह रहा है, वह ईश्वर रूपी पुरुष है | जो जीव रूपी पुरुष है, उसकी विद्या अनित्य है, झूठी है और परमात्मा रूपी पुरुष की विद्या नित्य है | वर्तमानकाल में लोगों ने साइकिल बनाई, मोटर साइकिल बनाई; किन्तु फिर भी इन सब चीजों में कोई न कोई कमी लगातार निकल रही है और इनके निर्माता कहते हैं कि अगले निर्माण में इस कमी को दूर किया जाएगा | छोटी-छोटी चीजें जैसे खुरपी-फावड़ा आदि में भी कमियाँ निकल रही हैं और इनके निर्माता कहते हैं कि इनके अगले निर्माण में इस कमी को दूर कर दिया जाएगा | चूँकि बनाने वाला स्वयं अपूर्ण है, इसलिए उसके द्वारा बनाई हुई वस्तु कभी भी पूर्णता को प्राप्त नहीं हो सकती, उनकी बनाई हुई वस्तुओं में अभी तक कमियाँ निकल रही हैं और वे घोषणा करते हैं कि अगली बार इस कमी को दूर कर दिया जाएगा किन्तु अभी तक ये कमियाँ दूर नहीं हो रहीं हैं | इसके विपरीत भगवान् की जो विद्या है, भगवान् की विद्या क्या है ? वेद ही भगवान् की विद्या है, 'वेद' भगवान् की श्वाँस है; यह सृष्टि भगवान् की विद्या है, इसमें आज तक कोई कमी नहीं हुई; एक 'मनुष्य' में कोई कमी नहीं है, वह देख भी सकता है, सुन भी सकता है, खा-पी भी सकता है, वह पञ्च ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा सूक्ष्मतम विषयों का अनुभव भी कर सकता है, वह कर्मेन्द्रियों के द्वारा चलने-फिरने का कार्य भी कर सकता है | अब विचार करो कि 'सूर्य' पृथ्वी से एक निश्चित दूरी पर स्थित है, इससे कम दूरी हो जाए तो लोग मर जायेंगे; नदियाँ हैं तो उन सबका प्रवाह समुद्र की ओर है, यदि वे समुद्र को छोड़कर इधर-उधर बहने लगे जाएँ तो बाढ़ के द्वारा लोगों की मृत्यु हो जाएगी | सबका अंतिम प्रवाह, अंतिम गति समुद्र है | 'सूर्य' यदि निश्चित दूरी से अधिक हो जाये तो 'पृथ्वी' बर्फ का गोला बन जाएगी और यदि इससे अधिक नीचे सूर्य आ जाये तो सभी प्राणी जलकर मर जायेंगे | 'भगवान्' की बनाई हर चीज इतनी व्यवस्थित व नियत है और ऐसा इसलिए है क्योंकि इसके निर्माता पूर्ण पुरुष 'ईश्वर' की यह विद्या नित्य है, वह विद्या चाहे हमारे वैदिक ग्रन्थों के रूप में है अथवा व्यावहारिक रूप से सृष्टि के रूप में है, वह विद्या नित्य है | भगवान् ने यह जाना कि धर्म का जैसा प्रचुर प्रचार-प्रसार वेदव्यासजी कर सकते हैं, वैसा कोई नहीं कर सकता है और उन श्रीवेदव्यासजी ने हम लोगों को क्या-क्या नहीं दिया; इन ग्रन्थों के रूप में उन्होंने हमें सब कुछ दे दिया; लौकिक चीजें ही नहीं बल्कि परमार्थ तक दे दिया | परमार्थ में भी जिन लोकों की हम लोग कल्पना नहीं कर सकते, जैसे - स्वर्गलोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक क्या हैं ? परव्योम धाम क्या है, नित्यधाम क्या है ? जहाँ मनुष्य की कोई पहुँच नहीं है लेकिन वह सब कुछ हम इन ग्रन्थों के माध्यम से जान सकते हैं, समझ सकते हैं, इनकी प्राप्ति कर सकते हैं; वेदव्यासजी द्वारा रचित ग्रन्थों में बताये हुए मार्ग का अनुसरण करने से वहाँ तक पहुँच सकते हैं | आप विचार करो कि क्या ऐसा कुछ है जो मनुष्य प्राप्त नहीं कर सकता ? जो हमारी कल्पना में नहीं है, वह भी हम प्राप्त कर सकते हैं इस पुरुष-विद्या (भगवान् की विद्या) के माध्यम से; यह 'पुरुष-विद्या' नित्य विद्या है, चाहे वह ग्रन्थों के माध्यम से है और चाहे इस व्यापक सृष्टि के रूप में हमें दिखाई पड़ रही है | भगवान् जानते थे कि जो काम वेदव्यासजी कर सकते हैं, उसे सृष्टि में दूसरा कोई नहीं कर सकता; इसलिए उन्हें भगवान् ने आज्ञा दी कि आप जाइये और धर्म का प्रचार कीजिये | भगवान् की आज्ञानुसार व्यासजी आये और वास्तव में यदि वेदव्यासजी न होते और उनके द्वारा रचित सुन्दर दिव्य ग्रन्थ हमें न प्राप्त होते तो क्या हम लोग सोच भी सकते थे कि 'धर्म' नाम की वस्तु क्या होती है, धर्म

क्या है ? हम लोग कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि धर्म क्या है, मानवता क्या है, यह हम लोग सोच भी नहीं सकते थे यदि ये ग्रन्थ हमारे पास न होते; यही है आधिकारिक सेवा, यह सेवा भगवान् ने वेदव्यासजी को सौंपी और उनको आज्ञा दी कि आप जाइये, धर्म-प्रचार का कार्य करिए तो उन्होंने यह सुन्दर कार्य किया | फिर भारत में एक समय ऐसी नास्तिकता की स्थिति आयी कि 'अनीश्वरवादी लोग' जैसे - बौद्ध और जैनी उत्पन्न हुए जो ईश्वर को नहीं मानते थे | जैन और बौद्ध आदि मत नास्तिक हैं, ये लोग आये तथा इन्होंने बहुत कुछ अनीश्वरवादिता (नास्तिकता) का मत फैलाया | तब 'भगवान्' ने शंकराचार्यजी को भेजा और आदिशंकराचार्यजी आये और उन्होंने अपने एक सुदृढ़ मत को रखा और उस वैदिक मत को रखते हुए शंकराचार्यजी ने उस नास्तिकता के झंडे को सारे भारत से उखाड़ फेंका; यह इस प्रकार था जैसे कोई भूमि हो और उसका उपयोग न किया जाए तो उसमें झाड़ी-काँटे आदि उग आते हैं, भारतवर्ष की स्थिति भी उस समय ऐसी ही हो गयी थी, भूमि बंजर हो गयी थी | आस्तिकता की भूमि में झाड़-काँटे उग आये थे | शंकराचार्यजी ने आकर भारत भूमि को साफ़ किया, नास्तिकता के झाड़ों को हटाया, अनीश्वरवादिता के कंकड़-पत्थरों को हटाया और फिर उसके बाद 'भगवान्' ने वैष्णवाचार्यों को भेजना आरम्भ किया; उन वैष्णव-आचार्यों की परम्परा के बारे में भक्तमाल को पढ़कर देखें तो पता लगेगा कि जितने भी आचार्य हुए, वे सभी दक्षिण भारत में उत्पन्न हुए; उसका कारण 'भागवत-माहात्म्य' में वर्णन है –

"उत्पन्ना द्रविडे साहं वृद्धिं कर्णाटके गता |"

(श्रीभागवत-माहात्म्य १/४८)

भक्ति महारानी ने स्वयं नारदजी से कहा है कि मैं द्रविड़ देश अर्थात् दक्षिण भारत में पैदा हुई; इससे पता पड़ता है कि भक्ति की जन्मभूमि दक्षिण भारत है परन्तु भक्ति का जो प्रचार हुआ, वह उत्तर भारत में हुआ | यानि भक्ति ने जन्म भले ही दक्षिण भारत में लिया किन्तु भक्ति को सम्मान मिला उत्तर भारत में | इसीलिए आज भी दक्षिण भारत की जो भूमि है, वह केवल वैधी भक्ति प्रधान है, कर्मकाण्ड प्रधान है किन्तु जो भक्ति का रस पक्ष है, वह उत्तर भारत में ही देखने को मिलेगा | अस्तु, जितने भी आचार्य हुए, वे दक्षिण भारत में हुए लेकिन इन सबने उत्तरभारत में ही आकर प्रचार किया | जन्म अवश्य आचार्यों का दक्षिण भारत में हुआ किन्तु इनके प्रचार का केंद्र 'उत्तर भारत' बना | केवल श्रीरामानन्दाचार्यजी ही ऐसे आचार्य हुए, जिनका जन्म काशी (उत्तर भारत) में हुआ, बाकी सभी आचार्यों का जन्म दक्षिण भारत में हुआ | शंकराचार्यजी के बाद रामानुजाचार्यजी आये, उन्होंने भक्ति के शास्त्रीय पक्ष को बहुत मजबूत रखा कि हम भक्ति का शास्त्रीय रूप से ही पालन करें | अमुक वर्ण को ही वैदिक धर्म में अधिकार है तथा अन्य वर्ग को अधिकार नहीं है; इसका परिणाम यह हुआ कि एक वर्ग सीमित रह गया, सिकुड़ गया कि केवल ब्राह्मण अर्थात् उच्च वर्ग ही भक्ति कर सकता है तो भगवान् ने देखा कि यह तो ठीक नहीं है, भक्ति में तो सबका अधिकार होना चाहिए | अतः सभी वर्गों को भक्ति का लाभ मिले, इसके लिए 'भगवान्' ने स्वयं रामानन्दाचार्यजी के रूप में आकर इस प्रकार भक्ति का प्रचार किया कि कोई भी वर्ग भक्ति से अछूता नहीं रहा | श्रीरामानन्दजी के जो प्रमुख बारह शिष्य थे, उन शिष्यों में 'रैदासजी' चर्मकार, 'कबीरदासजी' जुलाहा, 'सेनजी' नाई और 'त्रिलोचन भक्त' महाजन थे; रामानन्दजी ने किसी भी वर्ग को छोड़ा नहीं, सभी वर्गों को भक्ति प्रदान की और निम्न वर्ग के लोगों को भी अपना प्रमुख शिष्य बनाया किन्तु अभी भी सन्देह हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि किसी प्रान्त विशेष में ही भक्ति सिकुड़कर रह जाए तो पूरे भारत में भक्ति के प्रचार-प्रसार का प्रयास हुआ | यह आचार्यों की करुणा है कि वे किसी एक परिवार के लिए, किसी एक समाज के लिए, किसी वर्ण के लिए या किसी एक वर्ग विशेष के लिए नहीं आते हैं | महापुरुषों का जो व्यक्तित्त्व है, वह किसी का व्यक्तिगत व्यक्तित्त्व नहीं है कि वे किसी व्यक्ति विशेष के लिए आये हों, उनका अवतार जीवों का समान रूप से कल्याण करने के लिए होता है | अतः रामानन्दाचार्यजी आये, फिर यह हुआ कि

भक्ति का सम्पूर्ण भारत में प्रचार होना चाहिए, तब स्वयं वायुदेव 'श्रीमाध्वाचार्यजी' के रूप में आये; उसी परम्परा में फिर श्रीमच्चैतन्य महाप्रभु का प्राकट्य हुआ, जो स्वयं श्रीकृष्ण ही थे और श्रीराधारानी के मादनाख्य महाभाव का रसास्वादन करने के लिए पधारे, उन्हीं के काल में ही स्वयं वैश्वानर भगवान् महाप्रभु 'श्रीवल्लभाचार्यजी' के रूप में आये | सुदर्शन चक्र ही 'श्रीनिम्बार्काचार्यजी' के रूप में आये | इस प्रकार सम्पूर्ण धरती पर जब कृष्णभक्ति का प्रचुर प्रचार-प्रसार हो गया, ऐसा समझो कि जैसे श्रीशंकराचार्यजी ने तो भक्ति के लिए उपयुक्त भूमि को तैयार किया, फिर किसी ने आकर उस भूमि की जुताई की, किसी ने नराई की और फिर उसके बाद जब चारों ओर कृष्णभक्ति का व्यापक प्रचार हो गया तो श्रीभागवतजी में एक सिद्धांत है –

हरेर्निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभून्नृप |

(श्रीभागवतजी १०/५/१८)

ब्रज में राधारानी के खेलने योग्य भूमि कब बनी ? जब श्रीजी का जन्म होता है, तो राधाष्टमी का पर्व जन्माष्टमी के पन्द्रह दिन बाद आता है | राधारानी के आने के योग्य भूमि तब बनी जब श्रीजी से पहले श्यामसुंदर आ गये | 'हरेर्निवास' हरि का निवास होने के बाद फिर 'रमाक्रीडमभून्नृप' राधारानी के खेलने योग्य ब्रज बन गया; ऐसे ही जब तक संसार कृष्णभक्ति से अस्पृष्ट (अछूता) था, तब तक यदि राधारस का प्रचार-प्रसार करने वाले सखी-सहचरी स्वरूप 'रसिक महापुरुषजन' आ भी जाते तो संसार लाभ नहीं ले सकता था | इसलिए सबसे पहले नास्तिकता का खण्डन करके आस्तिकता को लाया गया | आस्तिकता में भी वैधी भक्ति, वैधी भक्ति में भी कृष्णभक्ति, विशुद्ध कृष्णभक्ति और विशुद्ध कृष्णभक्ति के बाद जब देख लिया कि संसार कृष्णभक्ति से व्याप्त है और अब ये लोग कुछ राधातत्त्व को समझ सकेंगे और राधारस के योग्य हो गये हैं; तब श्रीजी की सखी-सहचरियाँ पन्द्रहवीं सदी के लगभग उत्तरार्ध में आचार्यों के रूप में अवतरित हुईं ...

गौ-सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का

Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA, GAHVARVAN, BARSANA, MATHURA

Bank – Axis Bank Ltd **A/C – 915010000494364**

IFSC – UTIB0001058 **BRANCH – KOSI KALAN**

MOB. NO. - 9927916699

समर्पण का स्वरूप

बाबाश्री के सत्संग (८/८/२००२) से संकलित

'भगवान्' हृदय में हैं किन्तु दिखाई नहीं पड़ते और हमलोग दुःख भोग रहे हैं –

अस प्रभु हृदयँ अछत अबिकारी |
सकल जीव जग दीन दुखारी ||

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड – २३)

इसका कारण श्रीभागवतजी में बता दिया गया है –

यत्सानुबन्धेऽसति देहगेहे ममाहमित्यूढदुराग्रहाणाम् ।
पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्यां भजेम तत्ते भगवन् पदाब्जम् ॥

(श्रीभागवतजी ३/५/४३)

इस शरीर में, घर में, कुटुम्ब (परिवार) के प्रति ये मैं हूँ, ये मेरा है – ऐसा दुराग्रह जुड़ा हुआ है जबकि अपना है कुछ नहीं | मृत्यु के बाद हम इस संसार से एक भूसा का तिनका भी अपने साथ नहीं ले जा सकते किन्तु गृहस्थ तो क्या आज साधु (विरक्त) लोग भी संग्रह करते हैं और कहते हैं कि ये हमारा पैसा है, हमारा आश्रम है, यह दुराग्रह है | 'दुराग्रह' माने खराब आग्रह है | अपना है कुछ भी नहीं फिर भी हम लोग सभी चीजों को अपना मान लेते हैं | हमारा शरीर है, हमारा मकान है, हमारा बेटा है, बेटी है | अरे, जब शरीर ही तुम्हारा नहीं है तो बेटा-बेटी तुम्हारे कैसे हो जायेंगे | जिस शरीर में तुमने मैं-मेरापन आरोपित किया, जब वही तुम्हारा नहीं है, वही एक दिन छूट जायेगा, जल जायेगा | इसलिए शुकदेवजी कहते हैं कि ये दुराग्रह अर्थात् मूर्खता का आग्रह है, दुष्ट आग्रह है | हर चीज को मनुष्य अपनी समझ लेता है | जहाँ भी जाता है वहाँ की चीजों के प्रति 'मैं-मेरा' का भाव करने लगता है | इस प्रकार की दुष्ट बुद्धि जब तक है, तब तक भगवान् दिखाई नहीं देंगे | "पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्याम्" – शरीर के भीतर हृदय में भगवान् हैं किन्तु नहीं दिखाई पड़ेंगे क्योंकि हमारी असत् वृत्ति (बहिर्मुख मन) है | इसीलिए "भजेम तत्ते भगवन् पदाब्जम्" – देवता कहते हैं कि हे भगवन् ! हम आपके चरणकमलों का भजन करते हैं, आपके चरणकमल के भजन से यह बहिर्मुखी वृत्ति हट जाएगी | श्रीगीताजी में भगवान् ने कहा है –

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः |
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति ||

(श्रीगीताजी २/७१)

'निर्ममो' माने मेरापन की बुद्धि हट गयी, 'निरहंकारः' – अहं की बुद्धि हट गयी तो भगवान् आगे बोले – **"एषा ब्राह्मी स्थितिः" –** यह ब्राह्मी स्थिति है अर्थात् आपको भगवान् मिल गये | मैं-मेरापन की बुद्धि हटते ही भगवान् मिल जायेंगे |

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति |
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ||

(श्रीगीताजी २/७२)

'ब्रह्मनिर्वाण' अर्थात् भगवान् आपको मिल गये क्योंकि आप निर्मम, निरहं हो गये | 'मैं और मेरापन' की वृत्ति जब तक हमारे भीतर है, तब तक भगवान् की प्राप्ति नहीं होगी | माया की परिभाषा गो.तुलसीदासजी ने बहुत ही सरल ढंग से लिखी है –

मैं अरु मोर तोर तैं माया |
जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया ||

(श्रीरामचरितमानस, अरण्यकाण्ड -१५)

'मैं-मेरा, तू-तेरा' यही माया है, यह असद् वृत्ति जब तक है, भगवान् नहीं मिल सकते; इस वृत्ति को बड़े-बड़े लोग नहीं छोड़ पाते | शास्त्रों में लिखा है कि ऐसे-ऐसे वीर हुए हैं जो दस हजार रथियों को एक साथ हरा सकते थे परन्तु वे जरा भी अपमान नहीं सह सकते थे, वे 'मैं-मेरापन' नहीं छोड़ सके, इस वृत्ति का नाश होना कठिन होता है | इसलिए भगवान् ने बताया कि वीर कौन है ? वीर वह नहीं है जिसने हजार-दो हजार लोगों को मार दिया, युद्धभूमि में बड़ी शूरवीरता दिखाई, उसको वीर नहीं कहते | भगवान् कहते हैं कि वीर तो वह है, उसी ने सारे संसार को जीत लिया जिसने मन के विकारों पर विजय प्राप्त कर ली है अर्थात् जो सदा समत्व भाव में स्थित है –

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः |
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ||

(श्रीगीताजी ५/१९)

समभाव में रहने वाला वीर दुनिया में कहीं नहीं मिलता | दस हजार महारथियों से लड़ने वाले आपको मिल जायेंगे किन्तु ये जो 'अहंता-ममता' की विषमतायें हैं, इन्हें समाप्त करने वाला वीर नहीं मिलता है; ऐसा जिसने कर लिया, उसने सारे संसार को जीत लिया, एक इसी संसार को ही नहीं बल्कि उसने तो अनन्त ब्रह्माण्डों को जीत लिया जिसकी 'अहंता-ममता' की वृत्तियाँ समाप्त हो गयीं हैं, उससे बड़ा वीर न कोई था, न है, न होगा | उससे क्या होता है ? वह भगवान् की सम्यक् प्राप्ति है और यही वीरता ब्रज की गोपीजनों में थी, उनके जैसा त्याग-समर्पण आज तक किसी ने नहीं किया |

राजा बलि के दान के बारे में सब जानते हैं कि उन्होंने भगवान् से कहा कि आप मेरे सिर पर पाँव रख दीजिये, बलिजी के सिर पर 'भगवान्' ने पाँव रख दिया परन्तु अभी सिर को समर्पित करने वाला बाकी है | इसीलिए समर्पण तो केवल ब्रजगोपियों का ही सच्चा था | भगवान् की चीरहरण-लीला को संसार का कामी व्यक्ति नहीं समझ सकता | नग्न स्त्री का नाम सुनते ही भोगी आदमी की वृत्ति भोग की ओर, गंदगी की ओर चली जाती है | जबकि चीरहरण के प्रसंग में गोपियों के बारे में भागवत में लिखा है – **"शुद्धभावप्रसादितः"** 'श्रीभगवान्' ब्रजगोपियों के शुद्ध भाव से प्रसन्न हो गये और बोले – "अभी तुम लोग अपने घर जाओ, अगले वर्ष मैं तुम लोगों के साथ रास-विहार करूँगा |" (जबकि कामी पुरुष तो नग्न स्त्री को देखकर पाँच मिनट को भी नहीं रुक सकता |)

इस तरह भगवान् ने चीरहरण के द्वारा गोपियों की समस्त वृत्तियों का हरण किया; ऐसा न्याय शास्त्र के ग्रन्थ 'मुक्तावलि' के रचयिता कहते हैं | चीरहरण लीला बड़ी सूक्ष्म लीला है | जब तक हमारे भीतर किसी भी प्रकार का 'मैं-मेरापन' का आवरण है, तब तक भगवान् की प्राप्ति नहीं हो सकती | भगवान् ने कहा है कि 'चीरहरणलीला' कामविजयलीला है | इस प्रसंग में भगवान् ने गोपियों से कहा है – **न मय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते | भर्जिता क्वथिता धाना प्रायो बीजाय नेष्यते ||**

(श्रीभागवतजी १०/२२/२६)

हे देवियो ! जिसकी बुद्धि मुझमें लग गयी है, उसको काम नहीं सता सकता है | अनाज को लेकर भूँज दो, फिर उसे उबाल दो और तब उसे खेत में बो दो तो उससे अंकुर नहीं निकलेगा, कुछ नहीं निकलेगा | जिसकी बुद्धि 'कृष्ण' में लग गयी, फिर वह निज इन्द्रियभोग में नहीं लगेगा | चीरहरण की लीला 'मैं-मेरेपन' जैसी विकारमय वृत्तियों को समाप्त (हरण) करने का प्रकरण था | कैसे ? भगवान् ने ब्रजगोपियों से कहा कि तुम लोग अपने-अपने वस्त्र यमुना-जल के बाहर आकर ले जाओ, वे अपने अंगों को हाथों से ढककर बाहर आयीं | भगवान् ने कहा कि यह समर्पण नहीं है | समस्त वृत्तियाँ ही समाप्त हो जानी चाहिए | 'श्रीकृष्ण' ने गोपियों से कहा कि तुम लोग हाथ जोड़कर भगवान् को नमस्कार करो; उन्होंने नमस्कार किया | समस्त आवरणों को हटा दिया जिससे कि 'मैं-मेरेपन की वृत्ति' बिलकुल भी न रहे; ये सब असत् आवरण हैं | जैसा कि गोस्वामीजी ने कहा है – **मैं अरु मोर तोर तैं माया |** समर्पण तब पूरा होता है जब हमने जिसको समर्पण किया, वह स्वीकार कर ले, वह अपनी इच्छा से समर्पण करने वाले को भी स्वीकार कर ले, तब समर्पण सच्चा होता है क्योंकि समर्पण करने वाला तो बचा हुआ है | भगवान् ने गोपियों के वस्त्रों को उन्हें वापस कर दिया | क्यों ? इसका एक बहुत बड़ा रहस्य है | जो वस्त्र थे, जो आवरण का काम करते थे, वे भगवान् के कन्धे पर जाकर अब प्रसाद रूप हो गये थे, वे अब साधारण वस्त्र नहीं रहे, वे कृष्ण-रूप हो गये | भगवान् के सम्मुख आने पर सारा विक्षेप प्रसाद बन जाता है | (माया) अविद्या 'शुद्ध विद्या' बन जाती है और सारी स्थिति बदल जाती है | इसलिए ब्रजदेवियों का जो समर्पण था, ऐसा समर्पण आज तक कभी भी नहीं हुआ, चाहे राजा बलि हुए अथवा अनेकों भक्त हुए | क्योंकि राजा बलि ने भगवान् से कहा कि मेरे मस्तक पर आप अपना चरण रख दीजिये | अगर मस्तक पर 'भगवान्' ने चरण भी रख दिया तो 'मेरा मस्तक' कहने वाला बचा हुआ है | सारी वृत्तियों का जब लोप हो जाता है, वही सच्चा समर्पण होता है तथा इसके बाद जब प्रभु

उसको स्वीकार कर लेते हैं तब समर्पण सम्पूर्ण होता है | तुमने हमको कुछ दिया और हमने उसे स्वीकार नहीं किया तो समर्पण कैसे पूर्ण होगा ? अतः ब्रजगोपियों का समर्पण, उनका प्रेम अभूतपूर्व (बेजोड़) इसलिए है क्योंकि भीष्मजी ने कहा था कि 'गोपियाँ' गोपी नहीं रहीं; उनका प्रेम ऐसा था कि हम गोपी हैं, हम कृष्ण को समर्पण कर रहीं हैं, यह बात उनके हृदय से गायब हो गयी थी |

एकबार भारतवर्ष के एक प्रसिद्ध 'गीता के विद्वान्' से मेरी भेंट हुई; वे प्रतिदिन 'श्रीमद्भगवद्गीता' पर ढाई घंटे व्याख्यान (प्रवचन) देते हैं | मैंने उनसे कहा कि गीता में भगवान् ने एक विचित्र बात कही है कि मुझमें अध्यात्म चित्त से समर्पण होना चाहिए, सच्चा समर्पण यही माना जाता है |

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्न्यस्याध्यात्मचेतसा |
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः ||

(श्रीगीताजी ३/३०)

मेरा तो विचार यह है कि 'जीव' जान ही नहीं सकता है | स्वतः से स्वतः को 'जीव' नहीं जान सकता | जानने का एक ही तरीका है – **सोइ जानइ जेहि देहु जनाई |**

(श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड - १२७)

वह 'भगवान्' जना देता है, तब 'जीव' जान सकता है; नहीं तो अपने आप 'जीव' नहीं जान सकता है | इस कलियुग में कहाँ ज्ञान है, कहाँ योग है, कहाँ तप है, कहाँ वैराग्य है ? ऐसा मुझे कहीं दिखाई नहीं पड़ता | अब 'अध्यात्म तत्त्व के समर्पण' का प्रसंग है तो वस्तुतः जीव समर्पण भी नहीं कर सकता | जीव तो इतना दुर्बल है कि कौन छोड़ सकता है अपनी आसक्तियों को ...| यदि हम साधु बन गये तो क्या शरीर की आसक्ति को छोड़ देंगे ... शरीर तो सब जगह साथ जाता है | मैंने उन विद्वान् से कहा कि 'समर्पण' तो 'जीव' कर ही नहीं सकता | उन विद्वान् ने कहा कि जब 'जीव' समर्पण कर ही नहीं सकता तो फिर जो 'समर्पण' की बात कही जाती है, वह क्या है ? मैंने कहा कि 'जीव' समर्पण की तैयारी करता है, 'समर्पण' कर नहीं सकता है | जैसे - एक छोटा-सा बच्चा लड्डू खा रहा है, वह अपनी माँ के मुख की ओर लड्डू ले जाता है मैंने उन विद्वान् से पूछा कि यह 'अध्यात्म चित्त से समर्पण' क्या है ? यह मुझे समझ में नहीं आता | मैंने उनसे यह भी कहा कि मैं शास्त्रार्थ के लिए नहीं पूछ रहा हूँ, मैं तो केवल जिज्ञासा के कारण पूछ रहा हूँ; आप मुझे समझाइये |

उन विद्वान् ने उत्तर दिया कि 'अध्यात्म चित्त से समर्पण' यह है कि 'आत्मतत्त्व' को मनुष्य प्राकृत इन्द्रियों के द्वारा तो जान नहीं सकता | स्वतः के द्वारा स्वतः को जाना जा सकता है | उन्होंने 'करण, निरपेक्ष' आदि कई चीजें बतायीं कि इस तरह से 'अध्यात्म चित्त का समर्पण' होता है | मैंने उनसे कहा कि यह बात मेरी समझ में नहीं आती है | 'स्वतः से स्वतः को जानना' यानि 'आत्मबोध' अर्थात् अपने आप से अपने स्वरूप को जानना | यह ठीक है कि 'आत्मतत्त्व' को इन्द्रियाँ नहीं जान सकतीं हैं, बुद्धि नहीं जान सकती है | 'स्वतः से स्वतः को जानना' – ऐसा ज्ञानी लोग कहते हैं | यह ठीक है, ऐसा होता होगा किन्तु कि यह भी खा ले | माँ उसके दिए लड्डू को लेकर खा लेती है | बच्चे ने इस प्रकार लड्डू का समर्पण किया परन्तु वह समर्पण वास्तव में पूरा नहीं था क्योंकि लड्डू भी माँ का था, बच्चे का शरीर भी माँ का था; बच्चे के अन्दर भाव आया कि माँ इस लड्डू को खा ले | बच्चे के प्रेम को देखकर माँ ने अपने ही दिए लड्डू को बच्चे से लेकर खा लिया तो यह हो गया 'बच्चे का समर्पण' किन्तु यदि माँ बच्चे के दिए लड्डू को न लेती तो क्या होता ? क्या बच्चे का समर्पण पूर्ण होता ? नहीं होता | इसलिए मनुष्य तो समर्पण की तैयारी करता है, उसके अन्दर जब भाव आता है और प्रभु उसके भाव को स्वीकार कर लेते हैं तो यही 'समर्पण' हुआ | 'जीव' न तो समर्पण कर सकता है, न ही कुछ जान सकता है | जब उसके अन्दर सच्चा भाव आता है और उसके भाव को 'भगवान्' ग्रहण कर लेते हैं तो यही 'अध्यात्म चित्त का समर्पण' हुआ एवं उसकी पहचान हो जाती है – 'निराशीर्निर्मम' | जब मन भगवान् को समर्पित हो गया तो अब लड्डू आदि की कौन सोचेगा, पैसा और भोग की कौन सोचेगा ? 'सच्चा समर्पण' यही है |

श्रीभक्ति की पहिचान 'सहनशीलता'

बाबाश्री द्वारा अपनी माताजी के लिए लिखे गए पत्र से संकलित

'प्रतिकूल परिस्थिति में भी प्रसन्न रहना' भक्ति का लक्षण है और यदि दुःख में हमने थोड़ी भी खीझता प्रकट की, भुनभुनाहट व्यक्त किया तो यह ठीक नहीं है | 'प्रभु निर्दयी है, सुनता नहीं है, बहरा है' इत्यादि नीचता से भरी बातें करके दुःखी होने से अपनी सारी साधना को नष्ट किया तथा दुःखमयी परिस्थिति से भक्तिमय लाभ न लिया अर्थात् दुःख में अधिक प्रसन्न होकर प्रभु का स्मरण न किया तो यह परम दुर्भाग्य है | यदि अपने पिछले कुकृत्यों के फलस्वरूप हमें दुःख मिला तो हम 'भगवान्' को क्यों निर्दयी बनायें ? मैं तो यहाँ दुःख जान-बूझकर और चाहता हूँ, 'जाड़े की ठण्डी रात' खुले में ठिठुरकर बिताता हूँ, कभी भूखे रह लेता हूँ | जंगल के चोर-डाकू, सर्प व जंगली जानवरों द्वारा उत्पन्न दुःखों को भी सहता और उसे चाहता हूँ; इसके पीछे हमारी कहानियाँ हैं |

मैं पहले जाड़े में कपड़ा नहीं ओढ़ता था | राधाकुण्ड पर जाड़े की रात को शरीर को सिकोड़ कर बैठे हुए ही यह सोचकर काट लेता था कि मैं अब साधु बन गया हूँ, अतः मुझे कपड़ा ओढ़ने की क्या आवश्यकता ? उसी हालत में एकबार मैं अपने श्रीबाबामहाराज (श्रीगुरुदेव) के पास पहुँचा था तो उन्होंने मुझे डाँटा था और कहा कि ऐसा करना है तो यहाँ मत रहो | उस दिन से मैंने कम्बल ओढ़ना शुरू कर दिया था; नहीं तो मैं जाड़े में कुछ नहीं ओढ़ता था | चित्रकूट के जंगलों में इसी तरह से मैं रहा करता था तो वहाँ लोग मुझे परमहंस कहते थे, उस समय मैं केवल एक कौपीन धारण करता था | मानमन्दिर पर जब मैं आया तो यहाँ जल की सुविधा नहीं थी, 'जल' नीचे गह्वरवन से आता था, पहले मैं जल लाता था, उसके बाद ब्रजवासी व अन्य संत लाने लगे | अब तो मानमन्दिर में बहुत सुविधा है | पहले तो मैं बीसों घड़े जल भरकर नीचे से ऊपर मानमन्दिर प्रतिदिन लाया करता था |

पहले मैं भिक्षा नहीं माँगता था, अयाचित-वृत्ति से रहता था और फिर एक-दो दिन में बिना माँगे ही पता नहीं कहाँ से अपने आप ही मुझे भोजन मिल जाता था; उस समय मैं भिक्षा माँगना जानता भी नहीं था और जब बिना माँगे ही स्वतः भोजन मिल जाता था तो मैं राधारानी की करुणा देखकर रोया करता था; इन्हीं सब बातों की चर्चा मैंने इस पत्र में की है कि मैं इतनी कठिनाइयों को सहकर ब्रजवास कर रहा हूँ | उन दिनों मानमन्दिर डाकुओं का अड्डा था, अतः मैं और सखीशरणजी रात भर जागकर पहरा दिया करते थे, आधी रात वह जागते थे और आधी रात मैं जागता था | बहुत भयानक समय के दिन हमने यहाँ काटे और अनेकों विषम परिस्थितियाँ, बाधाएँ आयीं लेकिन एक भावना थी कि हम मरने के लिए ही यहाँ आये हैं और उस समय हम गाते भी थे – **"मरना तेरी गली में, जीना तेरी गली में |"** विशुद्ध भावनाओं की निष्ठा से श्रीभगवान् भी प्रेमाधीन होकर हर तरह से योगक्षेम धारण करते हैं | अतः जो घटनाएँ मेरे साथ घटित हुईं, उनका कोई भी प्रतिकूल प्रभाव मुझ पर नहीं पड़ा | संक्षेप में मैंने माताजी को पत्र में इनके बारे में लिख दिया था कि विरक्त संत तो अपने प्राणों का बलिदान तक कर देते हैं | कई बार जाड़े में बिना वस्त्र ओढ़े मैं रात बिता देता था, फिर भी किसी से कुछ लेता नहीं था | जब गरम कपड़े जाड़े में मैंने ओढ़ना शुरू किया तो सखीशरणजी ने बहुत सेवा की, उन्होंने एक गर्म ओढ़ने वाला बिछैया बनाया था और उसके भीतर धान के पयार भर दिए थे; धान का पयार भरकर और टाट ओढ़कर मैं मानमन्दिर की छत पर जाड़े की रात्रि व्यतीत करता था; वह गद्दा साल भर तक काम आया था; इन सब बातों का पत्र में जिक्र करते हुए मैंने माताजी को लिखा कि तुम यह संकल्प कर लो कि मैंने ठाकुरजी का सब कुछ उनकी आरती में चढ़ा दिया; समस्त कुल-परिवार, धन-मान, लोक-लाज, तन-मन आत्मा आदि सब कुछ प्रभु को समर्पित कर दो | ऐसा माताजी ने किया भी – प्रयाग में हमारे दो मकान थे, जिनसे किराया आता था, मेरे कहने से एक मकान

माताजी ने अपने नाती पीयूष के नाम लिख दिया और दूसरा मकान कुँवरजी के नाम लिख दिया | हालाँकि ऐसा करते समय उन्होंने मुझसे कहा था कि तुम तो साधु हो इसलिए पैसा नहीं रखते हो किन्तु अब मेरा भी हाथ काट रहे हो; उनका आशय था कि जिन मकानों से किराया उन्हें प्राप्त होता था और वे जीवन यापन करतीं थीं, उसको भी दूसरों के नाम कर देने पर जीवन-निर्वाह कैसे होगा ? मैंने माताजी से कहा कि 'भगवान्' से बड़ा कोई नहीं है, अतः मकान से प्राप्त धन को छोड़ दो | मेरे कहने से उन्होंने ऐसा ही किया और जितने भी मकान उनके नाम थे, उन्हें छोड़ दिया | इस प्रकार माताजी ने मेरी कुछ बात मान ही ली | पत्र में मैंने लिखा कि अपना तन, मन, आत्मा, धन, मान-प्रतिष्ठा आदि सब कुछ प्रभु को चढ़ा दो और फिर चढ़ाई हुई वस्तु पर तुम्हारा अधिकार नहीं होगा | 'जीव' अनाथ है, जब वह पति पुत्रादि का आश्रय त्यागकर 'श्रीकृष्ण' के आश्रय में रहता है तब सनाथ होता है | जब दाँतों से दबी साड़ी छूटती है और 'हा कृष्ण !' कहकर द्रौपदी केवल कृष्ण का आश्रय लेकर उनको पुकारती है, तभी उसकी रक्षा होती है | जब तक द्रौपदी को अपने पतियों का आश्रय है, उसकी दाँतों से दबी साड़ी छूटती है और 'हे कृष्ण !!' कहकर जब श्रीकृष्ण का आश्रय लेती है, तब वह सनाथ होती है | माताजी ! अब आप बोलो... अपना अंतिम निर्णय लिखकर भेजो | यदि अनाथ होना है तो मुझको प्रयाग बुलाओ | मैं अपना परमार्थ जलाकर आ जाने के लिए तैयार हूँ | जब तक तुम जीवित हो, मैं तुम्हारी सेवा करूँगा किन्तु तब भी तुम अनाथ ही रहोगी और मृत्यु के बाद भी अनन्तकाल तक भविष्य इतना अच्छा नहीं हो पायेगा | यदि सनाथ होना चाहती हो तो मुझे प्रभु को भेंट में दे दो | श्रीकृष्ण को सब कुछ दे दो, फिर तुम्हारे 'दुःख के आँसू' श्रीकृष्ण को तुम्हारा नाथ बनायेंगे और तुम 'श्रीकृष्ण' का आश्रय लेकर अनन्तकाल तक के लिए सनाथ हो जाओगी | फिर तुमको मेरे बारे में चिंता नहीं करनी होगी | फिर हम चाहे मरें, चाहे जियें, महात्मा बनें या सांसारिक कीड़े बनें; इसके बारे में तुम उदासीन होने की साधना करना क्योंकि हमने न्यौछावर कर दिया, अर्पण कर दिया; अब उस पर 'श्रीकृष्ण' का ही अधिकार है, वे बनायें अथवा बिगाड़ें | हम नित्य पुष्प चढ़ाते हैं और चढ़ाकर लौट आते हैं, फिर उस पुष्प का क्या होता है, यह नहीं जानते हैं | हम यह विश्वास रखें कि हमारे द्वारा चढ़ाये हुए पुष्प को ठाकुरजी ने अवश्य सूँघा होगा | हम एक तरफ लगना चाहते हैं, या तो मेरा पारमार्थिक लाभ नष्ट करके हमको अपने पास बुला लो, हमको ब्रजवास से छुटाकर अपनी सेवा में लगा लो या 'श्रीकृष्ण-सेवा' में लगा दो; एक निर्णय करो | हम तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा में तैयार बैठे हैं | श्रीकृष्ण की सेवा में लगाने पर यदि हम जायें तो भी एक राजपूत क्षत्राणी की भाँति पति, पुत्र को युद्ध में अर्थात् सेवा में भेजना होगा | (क्योंकि यहाँ मानमन्दिर में रहते समय कई बार सर्प भी आये, डाकू भी यहाँ रहते थे तो हमें विश्वास नहीं था कि हम जीवित रह सकेंगे |) पत्र की कौन कहे, हम यदि पत्र भेजें या वहाँ घर पर आयें; तब भी तुम हमसे मत बोलना, यही होगी सच्ची सेवा | अनन्त जन्मों में तुमको सहा, यदि एक जन्म में प्रसन्नतापूर्वक हिम्मत करके सह लिया तो बेड़ा पार | 'हम क्या करें, माँ का हृदय है' किन्तु ये सब गलत है | मनुष्य यदि साधना करे तो सब कर सकता है, एक पुत्र की आसक्ति पर लात मारना तो मामूली-सी बात है | मोरध्वज आदि माँ के पेट से महात्मा नहीं हुए, हिम्मत और अभ्यास से सब कुछ मिल जाता है, श्रीकृष्ण तक मिलते हैं एवं अकर्मण्यता और निराशा से न चाहने पर भी यमराज की प्राप्ति अनन्तकाल तक के लिए होती है | मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है, वह अभ्यास से सब कुछ कर सकता है; ऐसा भगवान् ने गीता में कहा है –

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते |

(श्रीगीताजी ६/३५)

माताजी ! यदि आपको ये दोनों मार्ग न पसन्द हों तो एक तीसरा मार्ग यह है कि यहाँ ब्रज में चली आओ | यहाँ सब प्रबन्ध निश्चय ही होगा और हम भी पास ही में रहेंगे | इसके लिए इलाहाबाद को बिलकुल छोड़कर आना होगा | जिस दिन भी यहाँ आने की इच्छा हो आ सकती हो | मेरा स्नेह व आसक्ति तुम सबसे है किन्तु क्या करूँ, एक ओर लगने से ही कल्याण होगा | एक माँ से अब हम दो ही तो बचे हैं – मैं और दीदी | एक फूल, दो शाखा | शास्त्र में बताया गया है कि स्नेह-ग्रन्थि तो मुनियों की भी समाप्त नहीं होती किन्तु उस स्नेह के पीछे अंधे होकर कर्तव्य का त्याग करना उचित है या अनुचित, तुम्हीं सोचो ...|

समता से असली योग

बाबाश्री के श्रीमद्भगवद्गीता-सत्संग (२७,२८/१/२०१२) से संकलित

श्लोक – ३९

एषा तेऽभिहिता साङ्ख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां श्रृणु ।
बुद्ध्या युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि ॥

हे पार्थ ! तुम्हारे लिए यह बुद्धि ज्ञानमार्ग के सन्दर्भ में कही गयी, अब मैं उसको कर्मयोग के विषय में कहूँगा, उसको सुनो, जिस बुद्धि से युक्त होने पर तुम कर्म करने पर भी बंधन को प्राप्त नहीं होगे |

अनादिकाल से चार बंधन जीव को जकड़े हुए हैं, वे हैं - काल, कर्म, स्वभाव और गुण | हर प्राणी इन चार रस्सियों से बँधा संसार में घूम रहा है | उसमें कर्म की रस्सी सबसे बड़ी है लेकिन जैसे ही मनुष्य समत्व की बुद्धि से युक्त होगा तो समस्त कर्मबंधन नष्ट हो जाएगा |

भगवान् अर्जुन से कहते हैं कि समत्व बुद्धि ही ज्ञान में मुख्य कारण है, योग के सम्बन्ध में भी इसी समत्व की बुद्धि को पुनः श्रवण करो, जिस बुद्धि से युक्त होकर तुम कर्मबंधन को छोड़ दोगे | इसलिए मायापार होने में, कर्मबंधन का नाश होने में तथा गुणातीत होने, इन सबमें समत्वबुद्धि ही काम देती है | यह 'समत्वबुद्धि' परमाणु बम है और इसका अभ्यास करना और कराना ही एक भक्त का लक्षण है | दो धारायें हैं - सांख्ययोग और कर्मयोग | इसे भगवान् ने ही गीता में कहा है -

लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ ।
ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥

(श्रीगीताजी ३/३)

दो प्रकार की निष्ठाएँ हैं, जिन्हें पहले मैंने तुमसे कहा था, वे हैं ज्ञानयोग और कर्मयोग | 'सांङ्ख्यानाम्' का अर्थ है ज्ञानमार्गी लोग अर्थात् ज्ञानमार्गी लोग ज्ञानयोग से चलते हैं तथा योगी लोग कर्मयोग से चलते हैं | यों तो गीता के अठारह अध्यायों में १८ योगों का वर्णन किया गया है | इसीलिए गीता के प्रत्येक अध्याय के अंत में कहा गया है -

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे .....

गीता के '१८ अध्याय' १८ उपनिषद् हैं, इसमें ब्रह्मविद्या का उल्लेख किया गया है | १८ उपनिषदों में जो १८ योग हैं, उनके अलग-अलग नाम हैं | गीता के दूसरे अध्याय का नाम है – सांख्ययोग | गीता का प्रत्येक अध्याय एक उपनिषद् है | उपनिषद् किस बात का है, यह ब्रह्मविद्या का उपनिषद् है | गीता कौन-सा शास्त्र है, यह योगशास्त्र है, इसके प्रत्येक उपनिषद् में एक योग का वर्णन किया गया है, कृष्ण-अर्जुन संवाद के रूप में | इन १८ योगों में दो योग प्रमुख हैं |

अब इस श्लोक (२/३९) में भगवान् कहते हैं कि अभी तक मैंने ज्ञानयोग के अनुसार बातें कहीं और दूसरा जो कर्मयोग है, उसमें कैसी बुद्धि चाहिए, उसको अब सुनो | 'बुद्धियोग' का अर्थ है - कर्मयोग | भगवान् कहते हैं कि अब कर्मयोग की बुद्धि सुनो, वह अलग है | 'ज्ञानयोग' अलग है और 'कर्मयोग' अलग है; ऐसा क्यों है, ऐसा इसलिए है क्योंकि ज्ञान की निष्ठा वाले 'ज्ञानयोग' से चलते हैं और कर्म की निष्ठा वाले 'कर्मयोग' से चलते हैं | दो प्रकार के साधक होते हैं – एक ज्ञान को प्रधान मानते हैं और दूसरे कर्म को प्रधान मानते हैं | 'ज्ञान' से अभिप्राय है 'आत्मा का ज्ञान' | भगवान् इस श्लोक में कहते हैं कि अभी तक मैंने तुमको आत्मज्ञान का उपदेश दिया था, जैसे – नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि ..... इस आत्मा को न तो हथियार काट सकते हैं, न आग जला सकती है और न ही इसको पानी भिगो सकता है और न ही हवा इसको सुखा सकती है | यह आत्मा अच्छेद्य, अदाह्य है, यह जलाई नहीं जा सकती, काटी नहीं जा सकती |

इस प्रकार इन श्लोकों में भगवान् ने सांख्य की बात बताई है, आत्मज्ञान बताया है, आत्मा का स्वरूप क्या है, इसका वर्णन किया है |

श्री बाबा महाराज के जन्मोत्सव के अवसर पर विश्व प्रसिद्ध,
आदरणीय कलाकारों द्वारा अविस्मरणीय प्रस्तुति

RNI Reference No. 1313397 - Registration No. UP BIL-2017/72945 - Title Code UP BIL-04953
Postal Regd. No. MTR 093/2021-2023
श्री मान मंदिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा Gupta Offset Printers A -125 /1, Wazirpur Industrial Area, New Delhi -52 से मुद्रित एवं मान मंदिर सेवा संस्थान, गह्वर वन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित